कौल-कल्पतरु

चण्डी

रां रामाय नमः

वर्ष ५९ अङ्क १

श्रीराम जय राम जय राम जय

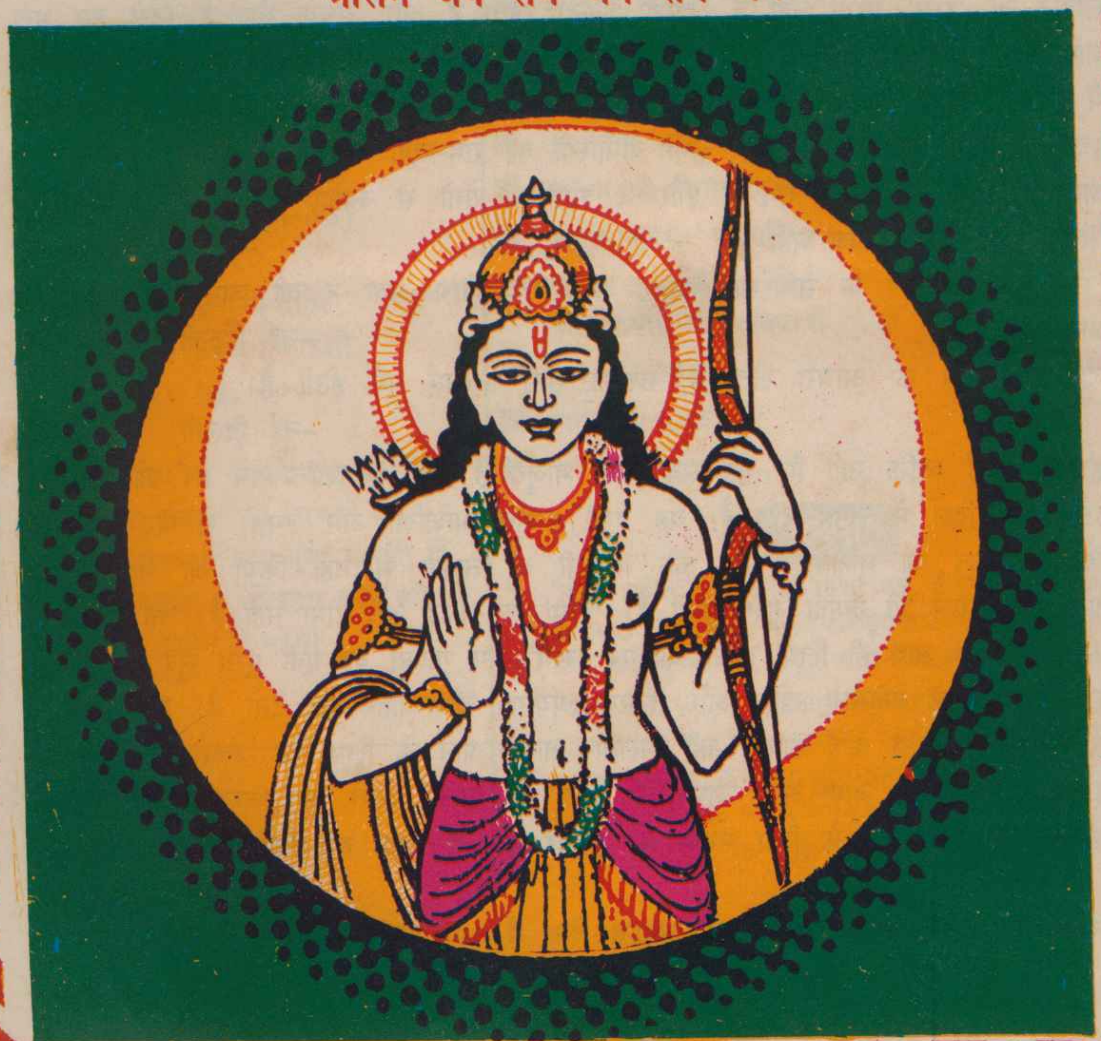

'राम'- नाम और गान्धी जी

- विकारी विचारों से बचने का एक अमोघ उपाय **'राम-नाम'** है। नाम **'कण्ठ'** से ही नहीं, किन्तु **'हृदय'** से निकलना चाहिए। –'सेवाग्राम', २८-१२-४४
- व्याधि अनेक हैं। वैद्य अनेक हैं, उपचार भी अनेक हैं। अगर सभी व्याधियों को एक मानें और उनको मिटानेवाला वैद्य एक **'राम'** ही है, ऐसा समझें, तो हम बहुत-सी झंझटों से बच जाएँ। –'सेवाग्राम', २९-१२-४४
- आश्चर्य है कि वैद्य मरते हैं, डॉक्टर मरते हैं, फिर भी उनके पीछे हम भटकते हैं, लेकिन जो **'राम'** मरता नहीं है, हमेशा जिन्दा रहता है और अचूक वैद्य है, उसे हम भूल जाते हैं। –'सेवाग्राम', ३०-१२-४४
- मैं जितना ज्यादा विचार करता हूँ, उतना ही ज्यादा यह महसूस करता हूँ कि ज्ञान के साथ हृदय से लिया हुआ **'राम-नाम'** सभी बीमारियों की राम-बाण दवा है। –उरुळी, २२-३-४६
- आसक्ति, घृणा वगैरा भी रोग हैं और वे शारीरिक रोगों से ज्यादा बुरे हैं। **'राम-नाम'** के सिवा उनका कोई इलाज नहीं है। –उरुळी, २३-३-४६
- **'राम'**-नाम के जप के साथ-साथ अगर **'राम'** के योग्य सेवा न की जाए, तो वह व्यर्थ जाता है। –नई दिल्ली, २१-४-४६
- जो **'राम'**-नाम का आसरा लेता है, उसकी सारी इच्छाएँ पूरी होती हैं। –नई दिल्ली, २५-५-४६
- **'ईश्वर'** कोई व्यक्ति नहीं है। वह सब जगह मौजूद है और सर्व-शक्ति-मान है। जो भी कोई उसे अपने दिल में जगह देता है, वह ऐसी अजीब आशाओं और उमङ्गों से भर जाता है, जिनकी ताकत का मुकाबला भाप और बिजली की ताकत से नहीं किया जा सकता। वह ताकत तो उससे भी ज्यादा सूक्ष्म होती है। **'राम'**-नाम कोई जादू-टोना नहीं है। वह तो अपने समूचे अर्थ के साथ ही लिया जाना चाहिए। **'राम'**-नाम गणित का एक ऐसा सूत्र या फॉर्मूला है, जो थोड़े में बेहिसाब खोज और तजरबे (प्रयोग) को जाहिर कर देता है। सिर्फ मुँह से **'राम'**-नाम रटने से कोई ताकत नहीं मिलती। ताकत पाने के लिए यह जरूरी है कि सोच-समझकर नाम जपा जाए और **'जप'** की शर्तों का पालन करते हुए जिन्दगी बिताई जाए। **'ईश्वर'** का नाम लेने के लिए मनुष्य को **ईश्वर-मय** या **खुदा की जिन्दगी** बितानी चाहिए। –**'पूना'**, २-७-४६
- **'राम'**-नाम का रसायन आत्मा को आनन्द देता है और शरीर के रोग मिटाता है। –**'पूना'**, ९-७-४६

***

'चण्डी' के प्रणेता

'कौल-कल्पतरु'
पं० देवीदत्त शुक्ल जी
की
११३वीं जयन्ती
वैशाख कृष्णा तृतीया
(२१ अप्रैल, २०००)
एवम्
२९वीं पुण्य-तिथि
ज्येष्ठ कृष्णा एकादशी
(२९ मई, २०००)
के
पावन अवसर पर आपके द्वारा विरचित
'साधक का संवाद' की 'चण्डी' वर्ष ५९
के प्रस्तुत प्रथमाङ्क द्वारा पुनः प्रस्तुति हो
रही है। आशा है, जिज्ञासु बन्धु इसे
ध्यान से पढ़ेंगे।

—ऋतशील शर्मा

■ सम्पादक
रमादत्त शुक्ल
ऋतशील शर्मा

■ पता :
चण्डी-धाम
अलोपीदेवी मार्ग, प्रयाग-राज
दूरभाष (०५३२) ५०२७८३

'कौल-कल्पतरु' चण्डी

चैत्र, 'विजय' सं० २०५७ वि०

'रां रामाय नमः'-अङ्क

इस अङ्क में

- 'राम'-नाम-रूपी विज्ञान २
- वेदों में 'राम'-नाम-तत्त्व ३
- तन्त्रों में 'राम'-नाम-तत्त्व ५
- उपनिषदों में 'राम'-नाम-तत्त्व ७
- उपनिषदों में 'र'-कार और 'म'-कार १०
- 'र'-कारादि श्रीराम-नाम-सहस्रनाम ११
- उल्टा नाम 'मरा' का रहस्य १६
- 'म'-कारादि श्रीराम-नाम-सहस्रनाम २१
- 'रां रामाय नमः' की महिमा २७
- धार्मिक जगत् की हल-चल (श्रीपीताम्बरा-पीठ, दतिया में जयन्ती कार्य-क्रम) २८
- नाम-मन्त्र-साधना २९
- साधक का संवाद ३३
- 'तन्त्र' में अनुसन्धान ३६

'सूचना'

* 'चण्डी' नवीन वर्ष ५९ का पहला अङ्क **'रां रामाय नमः'** (अप्रैल, २०००) एवं दूसरा अङ्क **'श्रीशङ्कराचार्य अङ्क'** (मई, २०००) सभी पाठकों की सेवा में एक साथ भेजा गया है।

* 'चण्डी' वर्ष ५९ में १० अङ्कों के स्थान पर अब पूरे १२ अङ्क प्रकाशित होंगे। **वार्षिक अनुदान १२०/-** होगा। जिन बन्धुओं ने १००/- भेजा है, वे कृपया सुविधानुसार शेष २०/- M.O. द्वारा या डाक-टिकट के रूप में भेजने का कष्ट करेंगे। अथवा, अगले 'चण्डी' वर्ष ६० के समय इसे भी जोड़कर भेजने की कृपा करेंगे।

* जो बन्धु **वी०पी०पी० द्वारा वार्षिक अनुदान** देते हैं, उनकी सेवा में **५०/- + ५०/- + ३५/- की तीन वी०पी०पी०** भेजी जाएँगी। पहली ५०/- की वी०पी०भेजी गई है। **दूसरी वी०पी० अगस्त, २०००** में और **तीसरी वी०पी० अक्टूबर, २०००** में जाएगी।

'राम'- नाम-रूपी विज्ञान

श्री ऋतशील शर्मा, चण्डी-धाम, प्रयाग-राज (उ० प्र०)

देश के सर्वाङ्गीण विकास हेतु माननीय प्रधान-मन्त्री श्री अटलबिहारी वाजपेयी जी ने '**जय विज्ञान**' का नारा दिया है। ठीक भी है, सभी देशों में आधुनिक विज्ञान की उपलब्धियों के द्वारा नागरिकों के जीवन को सुख-मय बनाने के प्रयास हो रहे हैं। हमारे यहाँ भी ऐसे प्रयास होने ही चाहिए।

'**जय विज्ञान**' - नामक नारे या आह्वान से हम सहमत हैं, किन्तु हमारा निवेदन यह है कि इससे केवल आधुनिक विज्ञान की उपलब्धियों का आशय ही न लिया जाए क्योंकि आधुनिक विज्ञान की उपलब्धियाँ जहाँ एक ओर सुख-सुविधा का वातावरण बना रही हैं, वहीं दूसरी ओर उनके द्वारा नए-नए दु:खों का भी सृजन हो रहा है। क्या छोटा-क्या बड़ा—सभी दु:खी, कठिन समस्याओं से ग्रस्त दिखाई दे रहे हैं।

हमारे यहाँ मनुष्यों को ऐसी दुर्दशा से बचाने के लिए बहुत पहले ही चेताया गया है। 'उपनिषद्' कहता है— "**हे मनुष्यों! सावधान!! विद्या में किए गए परिश्रम को अविद्या खा जाती है और अविद्या में किए गए परिश्रम को विद्या खा जाती है। अत: युक्त बनो!**"

उक्त कथन को '**चेतावनी**' के रूप में देखें, तो हम कह सकते हैं कि आधुनिक विज्ञान द्वारा हम मनुष्यों का परिश्रम-'**अविद्या**' अर्थात् सांसारिक सुखों की प्राप्ति में ही हो रहा है। हमारे इस परिश्रम को '**विद्या**' अर्थात् '**आत्म-ज्ञान**' का अभाव खा जाएगा। विज्ञान की सम्पूर्ण सफलता, हम मनुष्यों की कुटिल बुद्धि एवं दूषित मन के द्वारा नष्ट हो जाएगी। विज्ञान की उपलब्धियों के सम्बन्ध में उक्त दो-टूक '**चेतावनी**' आज चेतावनी-मात्र के रूप में नहीं ली जा सकती। अब यह सत्य होती हुई भी दिखाई दे रही है। आवश्यकता है कि '**अविद्या**' अर्थात् सांसारिक सुखों की प्राप्ति के साथ '**विद्या**' अर्थात् '**आत्म-ज्ञान**'-प्राप्ति हेतु भी पर्याप्त परिश्रम हो।

'**राम**'-नाम-रूपी विज्ञान— '**आत्म-ज्ञान**'- प्राप्ति का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। राष्ट्र-पिता महात्मा गान्धी 'राम'-नाम-रूपी विज्ञान से परिचित थे। यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि उन्होंने '**राम**'-नाम की साधना द्वारा ही वह विशेष शक्ति-ऊर्जा अर्जित की थी, जिसके कारण वे '**महात्मा**' कहलाए। उनका प्रयाण तक —'**हे राम!**' - शब्दों के साथ हुआ। '**राम**' ही उनकी सबसे बड़ी उपलब्धि थी।

'**राम**'-शब्द प्रत्येक शरीर-धारी के लिए उपयोगी है। इसके द्वारा शरीर के तीन मूल तत्त्वों— **१ अग्नि, २ सूर्य, ३ चन्द्र** की ओर ध्यान आकृष्ट होता है। '**र**'-कारात्मक '**अग्नि**' का अर्थ शरीर में स्थित स्थूल '**जठराग्नि**' तो है ही, साथ ही ज्ञानेन्द्रियों - कर्मेन्द्रियों की गति-शीलता भी है। '**आ**'-कारात्मक '**सूर्य**' से उस प्रकाश या महत् उद्देश्य से आशय है, जिससे हमारी इन्द्रियाँ प्रकाशित हो रही हैं और सचेष्ट हैं। '**अग्नि**'- रूपी गति-शीलता का पूरक भाग ही '**म**'-कारात्मक '**चन्द्र**' है, जिससे मानव-जीवन सार-मय बनता है। संक्षेप में, '**राम**'-शब्द रूपी '**आत्म-विज्ञान**' को जानना हम सभी देह-धारियों के लिए आवश्यक है। हमारे यहाँ इसी विज्ञान की प्राप्ति हेतु मुस्लिम या ईसाई विद्वान् आए और बसे भी। आज भी, हिन्दू-मुस्लिम-सिक्ख-ईसाई— सभी को इसे जानना चाहिए क्योंकि सब देह-धारी हैं और देह के तीन प्रधान संसाधन हैं— '**अग्नि-सूर्य-चन्द्र**'

'**चण्डी**' के प्रस्तुत अङ्क द्वारा '**राम**'-नाम-रूपी विज्ञान के सम्बन्ध में कुछ महत्त्व-पूर्ण सामग्री प्रस्तुत की जा रही है। हमें विश्वास है, पाठक-बन्धु इसे ध्यान से पढ़ेंगे। ★ ★ ★

वेदों में 'राम'- नाम का तत्त्व

* **'मानस-तत्त्वान्वेषी' पण्डित श्रीरामकुमार दास जी**

कुछ लोगों के मन में यह भ्रान्ति है कि '**वेदों**' में कहीं भी '**श्रीराम**'-**नाम** या '**श्रीराम-कथा**' का उल्लेख नहीं है। जिन लोगों के मन में ऐसी भ्रान्ति हो, उन्हें विद्वान् **श्रीनीलकण्ठ** द्वारा सम्पादित '**मन्त्र-रामायण**' को देखना चाहिए, जिसमें **श्रीनीलकण्ठ जी** ने '**राम-कथा**'- **विषयक ऋग्वेदीय मन्त्रों का सङ्कलन** किया है।

यहाँ '**राम**'-**नाम-मन्त्र के उद्धार से सम्बन्धित** '**ऋग्वेद**' **का एक मन्त्र** दिया जा रहा है, जिससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि '**राम**'- **नाम का तत्त्व-ज्ञान** बहुत प्राचीन है और समय-समय पर इसे ही नाना प्रकार के ग्रन्थों में कथा, ध्यान, मन्त्र, उपासना आदि विविध रूपों में प्रस्तुत किया गया है, जिससे सभी वर्गों के लोग लाभान्वित हो सकें।

॥ 'ऋग्वेद' में 'राम'-मन्त्रोद्धार॥

सचन्तः यदुषसः सूर्येण चित्रामस्य केतवो रामविन्दन्।
आयन्नक्षत्रं ददृशे दिवो न पुनर्यतो न किरद्धानु वेद॥

('ऋग्वेद', १०/११/०७)

अर्थात्—

केतवः अस्य राम— ज्ञानी लोगों ने वेद-त्रयी के सार-भूत '**प्रणव**' के कारण '**राम**'-पद को शब्दतः एवं अर्थतः—

अविन्दन् । यत्— प्राप्त किया। (जो लोग '**राम**'-पद से '**ॐ**' नहीं मानते, उनके लिए श्रुति कहती है कि) जैसे—

उषसः— उषा-काल में थोड़ा प्रकाश होता है; वैसे ही 'कल्प' के आदि में जो अल्प प्रकाश विराट्-रूपेण हुआ, वह 'अ'-**कार**-रूप है और जो—

सूर्येण— सूर्य के समान पूर्ण प्रकाश -रूप हिरण्य-गर्भ '**उ**' है।

सचन्तः— उन दोनों '**अ**'- '**उ**' को एक में मिलाते हैं अर्थात् '**ओ**' बनाते हैं

चित्राम् राम्— स्वर-युक्त '**चित्र**' — **अग्नि-बीज** '**राँ**' को।

दिवः— दिन, जैसे जागृत काल का अनुभव या देखा हुआ या सुना हुआ ही स्वप्न में पुनः प्राप्त होता है, उसी तरह यह बीज '**राँ**'—

पुनः ददृशे— फिर दुबारा ज्ञानियों द्वारा देखा गया (अर्थात् '**राँ राम**' ऐसा देखा गया , उसके बाद)—

आयत्— उस '**राँ राम**'- पद में '**आय**' जोड़ देने से '**राँ रामाय**' ऐसा रूप बना। (उसके बाद उसमें)—

नक्षत्रम्— '**चन्द्रमा**' अर्थात् चन्द्रमा का परम कारण हृदय के पर्यायवाची शब्द '**नमः**' को जोड़ देने से '**राँ रामाय नमः**' —ऐसा रूप बना।

उक्त प्रकार से श्रुति '**राम**'—मन्त्रोद्धार बताकर आगे '**राम**'-**मन्त्र के यजन का फल** बतलाती है। 'श्रुति' कहती है कि '**मन**', जो स्वभावतः चञ्चल है, ऐसा होते हुए भी—

यतः किः न— यतः अर्थात् उक्त मन्त्र के याजक का मन—फिर इधर-उधर विक्षिप्त नहीं होता। जापक का मन निर्विकार हो

जाता है और उस निर्विकार मन से '**राम**'- **तत्त्व** को—

वेद— वह साक्षात् —प्रत्यक्ष पा जाता है।

वयो-वृद्ध रामायणी **श्रीश्यामसुन्दर दास जी (कड़ा-प्रयाग)** ने अपनी '**वेद- तत्त्व-प्रकाशिका**' पुस्तिका में **ऋग्वेद** के उक्त मन्त्र की व्याख्या निम्न प्रकार से की है—

''ज्ञानियों ने श्रीराम-सम्बन्धिनी **वेद-त्रयी-सार-भूता ब्रह्म-बीज** '**राँ**'- रूपी सम्पत्ति को प्राप्त किया। 'प्रणव' (ॐ) और '**राम**'- मन्त्र में अभिन्नता है।.....यदि कोई यह सन्देह करे कि 'प्रणव' (ॐ) को ही ज्ञानियों ने प्राप्त किया था, '**राँ**' को नहीं, तो इसी मन्त्र में '**चित्राम्**' -पद दिया है और '**अग्नि**' को '**चित्र**' कहा जाता है क्योंकि वह '**चित्र-किरण**' है।.....अतः स्पष्ट है कि ज्ञानियों ने '**राँ**'-बीज को प्राप्त किया था।

प्रस्तुत ऋचा के पूर्वार्द्ध से '**राँ**'-बीज सिद्ध होता है। उत्तरार्द्ध से '**रां**'- बीज प्रथम पद, '**रामाय**'—मध्यम पद और '**नमः**'- अन्तिम पद सिद्ध होता है। □ □

तन्त्रों में 'राम'-नाम-तत्त्व

'कुल-शिरोमणि' श्रीधनशमशेर जङ्ग बहादुर राणा, नेपाल

'**आगम**' अर्थात् **तन्त्रों** में लिखा है—

'राकारे विद्यते माया, मकारे विद्यते शिवः।
शिव-शक्त्यात्मको मन्त्रो, राम-रामेति गीयते॥'

'राम शक्तिरिति-ख्यातः, स शिवः परिकीर्तितः।
शिव-शक्त्यात्मकं ब्रह्म, राम-नामाक्षरात्मकम्॥'

उक्त वचनों से स्पष्टतया विदित होता है कि '**राम**'-**नाम—शिव-शक्त्यात्मक** है। **शक्ति**-प्राधान्य करके **शिव** को सूक्ष्म अर्थात् '**नाद—विन्द्वात्मक**' बनाने से '**राँ**'-बीज-मन्त्र —भुक्ति-मुक्ति देनेवाला '**तारक' मन्त्र** माना गया है। यह '**तारक**' **मन्त्र** विशेष रूप से उन लोगों के लिए है, जिन्हें '**तारक मन्त्र**' —'**प्रणव**' (ॐ) के उच्चारण करने का अधिकार नहीं है। जिन्हें '**प्रणव**' (ॐ) के उच्चारण का अधिकार है, उनके लिए तो '**प्रणव**'-**मन्त्र** (ॐ) ही '**तारक मन्त्र**' है। दूसरे शब्दों में '**राँ**'- बीज '**प्रणव**' के अनधिकारियों के लिए '**प्रणव**' का अनुकल्प है। '**अध्यात्म-रामायण**' में लिखा भी है—

'ॐकार - वाच्यस्त्वं राम, वाचा य विषयः पुमान्।
वाच्य - वाचक - भेदेन, भवानेव जगन्मयः॥'

वाल्मीकि जी पहले व्याध थे, उन्हें '**प्रणव**' **-जप का अधिकार** न था। दूसरे शब्दों में '**प्रणव**' से उनका उद्धार सम्भव न था। **सप्तर्षि** शास्त्र के मर्मज्ञ थे। वे **अधिकार-भेद** आदि सभी बातें अच्छी तरह जानते थे और पूर्ण विचार कर ही मनुष्यों को सही राह दिखाते थे। **सप्तर्षि** जानते थे कि **वाल्मीकि** मोहान्धकार के वशीभूत होकर अपनी व्याध-वृत्ति के कुकर्मों से यम-यातना में जा रहे हैं। वे '**तारक मन्त्र**'—'**प्रणव**' का वास्तविक उच्चारण-जप कर ही नहीं सकते थे। अतः उन्होंने **वाल्मीकि** को पहले उनके द्वारा वाचन-योग्य '**मरा**'-**नामक मन्त्र की दीक्षा** दी, जो **विपरीत** '**राम**'-**नाम** था। **वाल्मीकि** इसी **विपरीत** '**राम**'-**नाम— 'मरा**' को जपते हुए क्रम-पूर्वक उपासना करते-करते अन्त में **ब्रह्म-गायत्री-मर्मज्ञ महा-कवि-वर महर्षि** बने। हमें भी यह ध्यान रखना चाहिए कि जहाँ तक अधिकार है, वहीं से प्रारम्भ कर ऊपर पहुँचना चाहिए। एकदम ऊपर पहुँचने की चेष्टा करने से गिरने की सम्भावना रहती है।

'**मेरु-तन्त्र**' में श्रीराम के मन्त्रों का उद्धार इस प्रकार है—'**रामाय नमः इत्येष, राँ क्लीँ ह्रीं ऐँ तु पूर्वकः। श्रीँ तारादयश्च षड्-वर्णः, षड्-विधः परिकीर्तितः॥ ब्रह्मा सम्मोहन-शक्तिर्दक्षिणामूर्तिरेव च। अगस्त्यः श्रीशिवः प्रोक्तो, मनवोऽनुक्रमादिमे छन्दो गायत्र-संज्ञं च, श्रीरामो देवता मतः॥**'

अर्थात् 'राम'- नाम-मन्त्र के छः विशिष्ट प्रकार हैं। यथा—

	मन्त्र	ऋषि	छन्द	देवता
१.	राँ रामाय नमः	ब्रह्मा	गायत्री	श्रीराम
२.	क्लीँ रामाय नमः	सम्मोहन	''	''
३.	ह्रीँ रामाय नमः	शक्ति	''	''
४.	ऐँ रामाय नमः	दक्षिणामूर्ति	''	''
५.	श्रीँ रामाय नमः	अगस्त्य	''	''
६.	ॐ रामाय नमः	श्री शिव	''	''

'कर-षडङ्ग-न्यास' मन्त्र के अङ्गों से किए जाते हैं। 'ध्यान' के सम्बन्ध में ग्रन्थों में कई भेद दृष्टि-गोचर होते हैं, अपनी गुरु- परम्परा के अनुसार ही 'ध्यान' करना चाहिए। 'वशिष्ठ संहिता' में ध्यान इस प्रकार दिया है—

चतुर्भुजं शङ्ख-चक्र-गदा-पङ्कज-धारिणं। किरीट-हार-केयूर-रत्न-कुण्डल -मण्डितम्॥

एक दूसरा ध्यान इस प्रकार है—

ध्यायेत् कल्पतरोर्मूले, सौवर्ण-मण्डपं मुने! तन्मध्ये पुष्पकाख्यं च, विमानं दिव्यमुत्तमम्॥
मध्ये सिंहासनं तस्य, नाना-रत्न-विभूषितं। तन्मध्येऽष्ट-दलं पद्ममुद्यदात्ति-सन्निभम्॥
श्रीराममेनं तन्मध्ये, समासीनं महा-मुने! सम्यग्-ज्ञान-मयीं मुद्रां, दधानं दक्षिणे करे॥
तेजः प्रकाशनं वामं, जानु मूर्धनि चापरम्। जानकी-वल्लभं देवमिन्द्र-नील-सम-प्रभम्॥
उद्यान-निरतं देवं, द्वि-भुजं रघुनन्दनम्। वशिष्ठ-वाम-देवादि-मुनिभिः परिवारितम्॥
वाम-भागे-समासीनां, सीतां काञ्चन-सन्निभाम्। भजतां कामदां नित्यं, रक्तोत्पल-कराम्बुजाम्॥
लक्ष्मणं पश्चिमे भागे, धृत-क्षत्र-सुचामरम्। पार्श्वे भरत-शत्रुघ्नौ, ताल- वृन्त-करावुभौ॥

'शारदा-तिलक तन्त्र' में भागवान् राम का ध्यान इस प्रकार दिया है—

कालाम्भोधर-कान्ति-कान्तमनिशं वीरासनाध्यासिनं।
मुद्रां ज्ञान-मयीं दधानमपरं हस्ताम्बुजं जानुनि॥
सीतां पार्श्व-गतां सरोरुह-करां विद्युन्निभां राघवम्।
पश्यन्तं मुकुटाङ्गदादि -विविधाकल्पोज्ज्वलाङ्गं भजे॥

मेरु-तन्त्र' में भगवान् श्रीराम का ध्यान इस प्रकार है—

वीरासन - समारूढं, व्याख्या - मुद्रोपशोभितम्।
वामोरु - न्यस्त तद् - हस्तं, सीता-लक्ष्मण-संयुतम्॥ * * *

उपनिषदों में 'राम'-नाम का तत्त्व

'**राम-रहस्योपनिषद्**' में श्रोताओं ने **हनुमान् जी** से पूछा— महा-बली अञ्जनी-नन्दन! गृहस्थों को '**प्रणव**' **का अधिकार** कैसे प्राप्त होता है?

हनुमान् जी ने कहा—''इस विषय में **श्रीराम** का ही कथन इस प्रकार है, '**जिसका षडक्षर मन्त्र (रां रामाय नमः) में अधिकार है, उन्हीं का 'प्रणव' में अधिकार है, दूसरों का नहीं**। जो केवल **अ-कार, उ-कार, म-कार** और **अर्ध-मात्रा-सहित प्रणव** की ऊहा करके **श्रीराम-मन्त्र** का जप करता है, उसके लिए मैं शुभकारक होऊँगा। जो प्रणवस्थ अ-कार, उ-कार, म-कार और अर्ध-मात्रा के ऋषि, छन्द , देवता और उन-उन वर्णों एवं अवर्णो के अवस्थान, स्वर, वेद, अग्नि एवं गुणों का उच्चारण करके प्रति-दिन प्रणव मात्रा से दूना जप करता है और जप के पश्चात् '**राम**'-**मन्त्र का** '**जप**' करता है, वह '**राम**'-**स्वरूप** हो जाता है।

★ ★ ★

'**राम-रहस्योपनिषत्**' में **सनकादि मुनियों** ने **हनुमान् जी** से पूछा—'महा-बली अञ्जनी-नन्दन! तारक-ब्रह्म **श्रीरामचन्द्र के मन्त्र-समुदाय का स्वरूप** क्या है?

हनुमान् जी ने कहा—''अग्नि-बीज '**र**' में विष्णु-शय्या शेष अर्थात् '**आ**' मिला हो और वह **अर्ध-चन्द्र (अनुस्वार)** से विभूषित हो, तो यह **श्रीराम का एकाक्षर-मन्त्र (राँ या रां)** होता है। यह मन्त्र-राज कल्प-वृक्ष के समान सभी कामनाओं की पूर्ति करनेवाला है।

इस मन्त्र के '**ब्रह्मा**' ऋषि, '**देवी गायत्री**' छन्द तथा '**श्रीराम**' देवता हैं। '**राँ**' बीज, '**रां**' शक्ति तथा अभीष्ट-सिद्धि के लिए जप में इसका विनियोग है। वह्नि ('**र**'-**कार**)- स्वरूप मन्त्र के साथ दीर्घ स्वर अर्ध-चन्द्र (ँ) का योग करके 'अङ्ग-न्यास' करना चाहिए। यथा- **राँ हृदयाय नमः। रीं शिरसे स्वाहा। रूँ शिखायै वषट्। रैं कवचाय हुम्। रौं नेत्र-त्रयाय वौषट्। रः अस्त्राय फट्।**

'**ध्यान**' इस प्रकार करना चाहिए—

सरयू-तीर-मन्दार-वेदिका-पङ्कजासने। श्यामं वीरासनासीनं, ज्ञान-मुद्रोपशोभितम्॥

वामोरु-न्यस्त-तद्धस्तं, सीता-लक्ष्मण-संयुतम्। अवेक्षमाणमात्मानमात्मन्यमित-तेजसम्।।

अर्थात् सरयू के तट पर मन्दार-वृक्ष के नीचे एक वेदिका बनी हुई है और उसके ऊपर एक कमल-पुष्प का आसन है, जिस पर श्याम-कान्तिवाले श्रीराम वीरासन से बैठे हुए हैं। उनका दाहिना हाथ ज्ञान-मुद्रा (दाहिने हाथ की तर्जनी और अँगूठे को सटाकर आगे की ओर छाती पर रक्खे। यह 'ज्ञान-मुद्रा' है, जो श्रीरामचन्द्र को बहुत प्रिय है।) से सुशोभित है। उन्होंने अपना बाँयाँ हाथ वाम ऊरु पर रक्खा है। उनके बाँईं ओर भगवती सीता

जी तथा दाहिनी ओर लक्ष्मण जी विराजमान हैं। श्रीराम अपने अमित तेजस्वी स्वरूप को अपने ही भीतर चिन्तन कर रहे हैं।

शुद्ध-स्फटिक-सङ्काशं, केवलं मोक्ष-कांक्षया॥ चिन्तयन् परमात्मानं, भानु-लक्षं जपेन्मनुम्॥

'श्रीराम' का उक्त स्वरूप शुद्ध स्फटिक के समान निर्मल है। इस प्रकार ध्यान द्वारा मोक्ष की कामना से, **'रां'**— एकाक्षर मन्त्र का **१२ लाख 'जप'** करे।

★ ★ ★

वह्नि (**र्**), नारायण (**ा**), नाड्य (म्), जाठर (**अ**) तथा केवल (**:**)— इन सबके मेल से **'रामः'** यह दो अक्षरों का मन्त्र सम्पन्न होता है। यह मन्त्र-राज सम्पूर्ण अभीष्ट फलों को देनेवाला है।

इसके ऋषि आदि पूर्वोक्त एकाक्षर-मन्त्र (**राँ**) के समान ही हैं। मन्त्र के आदि अक्षर— **'रां'- रीं- रूं- रैं- रौं- रं:'**— से **षडङ्ग-न्यास** करना चाहिए।

द्व्यक्षर मन्त्र (**'राम'**) के आदि में १. तार (**ॐ**), २. माया (**ह्रीं**), ३ रमा (**श्रीं**), ४. अनङ्ग (**क्लीं**), ५ वाक् (**ऐं**) तथा ६. रक्त-बीज (**रां**)— इन छः बीजों को जोड़ने से छः त्र्यक्षर मन्त्र होते हैं। यथा— **१ ॐ रामः। २ ह्रीं रामः। ३ श्रीं रामः। ४ क्लीं रामः। ५ ऐं रामः। ६ रां रामः।** ये सभी त्र्यक्षर मन्त्र-राज सम्पूर्ण अभीष्ट फलों को देनेवाले हैं।

★ ★ ★

द्व्यक्षर मन्त्र (**'राम'**) के अन्त में क्रमशः **'चन्द्र'** या **'भद्र'** शब्द जोड़ने पर दो प्रकार के चतुरक्षर मन्त्र होते हैं। यथा— १. **रामचन्द्रः**, २. **रामभद्रः**। त्र्यक्षर, चतुरक्षर मन्त्रों के ऋषि आदि एकाक्षर मन्त्र-वत् ही जानने चाहिए।

★ ★ ★

प्रतिष्ठा (**आ**)- सहित **'र'** और **'म्'** (अर्थात् **'राम'**) के आगे **'आय'**-शब्द और अन्त में हृदय (**नमः**) का संयोग करे, तो **'रामाय नमः'**— यह पञ्चाक्षर मन्त्र सम्पन्न होता है। इस मन्त्र के ऋषि **'विश्वामित्र'**, छन्द **'पंक्ति'** तथा देवता **'रामभद्र'** हैं। बीज प्रथम अक्षर **'रां'** और शक्ति द्वितीय अक्षर **'मां'** है। मन्त्र के एक-एक अक्षर से भ्रू-मध्य, हृदय, नाभि, ऊरु-द्वय तथा पाद-द्वय में **'न्यास'** करना चाहिए। इसी प्रकार **अङ्ग-न्यास** करना चाहिए। यथा— **रां हृदयाय नमः, मां शिरसे स्वाहा, यं शिखायै वषट्, नं कवचाय हुम्, मः नेत्र-त्रयाय वौषट्, 'रामाय नमः' अस्त्राय फट्।**

'ध्यान' इस प्रकार करना चाहिए —'वन के बीच कल्प-वृक्ष के नीचे पुष्प-लता के आसन पर भगवान् श्रीराम बैठे हैं और लक्ष्मण के द्वारा जिस पर डोरी चढ़ाई गई है, उस धनुष को वे नेत्र के कोण-भाग से देख रहे हैं। जानकी जी उन परमेश्वर राम को व्यजन डुलाकर सुख पहुँचा रही हैं। उनका मस्तक जटाओं के भार से

सुशोभित है। उनके अङ्गों की कान्ति श्याम है तथा मुनि-जन उन्हें घेर कर बैठे हैं।'

अथवा इस प्रकार **ध्यान** करे — 'भगवान् पुष्पक विमान के ऊपर बैठे हैं। लक्ष्मण जी ने उनके सिर पर छत्र लगा रक्खा है। दश-मुख रावण का संहार करके लौटे हुए वे राम, सुग्रीव तथा विभीषण के साथ उस विमान पर विराजमान हैं।'

इस प्रकार '**ध्यान**' करके **पञ्चाक्षर मन्त्र** का **५ लाख** '**जप**' करे।

★ ★ ★

सनकादि मुनियों ने **हनुमान् जी** से पूछा—'हे पवन-नन्दन! **श्रीराम-मन्त्र** का अर्थ क्या है? इसका हमारे समक्ष निरूपण कीजिए।

हनुमान् जी बोले— मुनीश्वरों! सम्पूर्ण 'राम'-मन्त्रों में **षडक्षर मन्त्र—'मन्त्रराज'** माना गया है। वह अनेक रूपों में व्यवस्थित है। **'षडक्षर मन्त्र' के माहात्म्य को भगवान् शिव ही ठीक-ठीक समझते हैं।**

नारायण-अष्टाक्षर (**ॐ नमो नारायणाय**) तथा शिव-पञ्चाक्षर (**नमः शिवाय**) में जो सार्थक दो अक्षर '**रा**' और '**म**' हैं, वे ही '**राम**' हैं, जिनमें योगी-जन रमण करते हैं।

'**र**'-कार—**अग्नि** का वाचक है, जो **प्रकाश** के अर्थ में पर्यवसित होता है। अतः 'र'- कार—**सच्चिदानन्द-स्वरूप** है। इसका अर्थ **परमात्मा** बताया जाता है। व्यञ्जन **निष्कल ब्रह्म** है और '**आ**'-कार स्वर— प्राण एवं माया का वाचक है। व्यञ्जन के साथ जो स्वर का संयोग (**र+ा = रा**) है, उसे **चेतन के साथ प्राण-संयोजन** समझो। इसीलिए ज्योतिर्मय रेफ में '**आ**'- कार की योजना की गई है।

'**म**'-**कार— अभ्युदय** का वाचक है, इसीलिए उसे **माया** भी कहते हैं। यह '**म**'-**कार—'राम'-मन्त्र का अपना बीज** है, इसीलिए '**राम**'- **शब्द से माया-युक्त (लीला-मय) ब्रह्म का प्रतिपादन** होता है।

'**रां**' में जो अनुस्वार उच्चारित होता है, वह '**विन्दु**' कहा गया है। यह **सविन्दु पुरुष का बोधक** है। यह पुरुष —**शिव, सूर्य** और **चन्द्र-रूप** है। '**ज्योति**' उसकी शिखा है और '**नाद**'-**रूप** है। '**नाद**' को ही '**प्रकृति**' कहा गया है। **प्रकृति** और **पुरुष** —दोनों का आविर्भाव **माया-युक्त ब्रह्म** से हुआ है। **बिन्दु-पुरुष** और **नाद-प्रकृति** है। यह **बिन्दु-नादात्मक बीज—अग्नि-कला** और **सोम-कला**—स्वरूप है और **अग्नि-षोमात्मक**-रूप '**राम**'- **बीज** में प्रतिष्ठित है। जैसे वट-वृक्ष के भीतर प्राकृत विशाल वृक्ष अवस्थित है, उसी प्रकार '**राम**'-बीज में सम्पूर्ण चराचर जगत् निहित है।

'**तत्त्वमसि**' आदि महा-वाक्य केवल मुक्ति देनेवाले हैं किन्तु '**राम**'- **मन्त्र— भोग** और **मोक्ष** दोनों का दाता है। यह **महा-वाक्यों** से भी बढ़कर है। (सबसे बड़ी बात यह कि) '**राम**'- **मन्त्र में समस्त देह-धारियों—मनुष्यों का अधिकार** है।

* * *

सीतां पार्श्व-गतां सरोरुह-करां विद्युन्निभां राघवम्।
पश्यन्तीं मुकुटाङ्गादादि-विविधैः कल्पोज्वलाङ्गं भजे।।

।।मूल-पाठ।।

ॐ रामो रमा-करो दीर्घो, रक्त-नेत्रो रमा-पतिः। रण-भूमि-विहारी च, रक्त-पादो रणच्छविः।।१
रघुवीरः महा - वीरो, धीरो वै सर्व-राट् रविः। रेवा-नाथार्चित-पादो, रामो राजीव-लोचनः।।२
राज - धर्म - प्रियोऽरिष्टो, विशिंसो राक्षसान्त-कृत्। रामो अनन्त-मर्यादा-पालको राघवो हरिः।।३
रम्भा - फल - कृताहारी, रम्भा - प्राण - सुरोत्तमः। रमा-रमण-सर्वेशो, रघुवंशज-पालकः।।४
रत्न - रत्नानि वर्माणि, दिव्य - रत्न-विभूषितः। ऋषिश्चरो महा-प्राज्ञो, राजत्-केयूर-कुण्डलः।।५
रञ्जको भञ्जको खर्वो, रक्त - वस्त्र - सदा - प्रियः। रण-मूर्त्तिः रणे-कर्मी, रण-ध्यान-परायणः।।६
रण - युद्ध - रतो विद्वान्, रण-विद्याति-चातुरः। रिम्फ-तुम्फ-स्फुराङ्गानि, राजीवो राजस-प्रियः।।७
रम्य - मूर्त्ति राज्य-भोगी, राज्य-भोग-प्रदः पुमान्। रमा-कर्म-रतो वीरो, रामः सन्तुष्ट-चेतसः।।८
रमा - विहारी रघु - राट्, रमा - शक्त्यैक-विग्रहः। रमा-विग्रह-धारी च, रमा-ध्यान-परायणः।।९
रमाऽभिचार - निरतो, रमाऽऽज्ञा - परि - पालकः। रमा-रमैक-सन्तुष्टो, रमा-रमण-वत्सलः।।१०
रमा - प्रमोद - सहितो, रमा - अग्र-गतो हरिः। रमा-सहायो भगवान्, रावण-प्राण-हारकः।।११
रमा - सर्व - करी साक्षी, राम-भद्रो रमा-निधिः। रमा-प्रियो रमेयात्मा, रमा-भाग्य-विवर्धनः।।१२
रमा - कान्तो रमा-नाथो, राघवोऽरिष्ट-भञ्जनः। रमा विश्वस्य जननी, राघवेन्द्र-स्वरूप-धृक्।।१३
रमा - प्रचारी भगवान्, रमा-सम्बोधनः प्रभुः। रमा-कार्य-रतो रिक्तो, रमा-लावण्य-सम्भवः।।१४
रमा - दान - रतो श्रीशो, रमा - पालन-पालकः। रमा-रमेन्दु-रक्ताङ्गो, रक्त-विग्रह-विग्रहः।।१५
रमा-दया-करो विष्णुः, आदि-नारायणो कविः। रमा-विश्व-स्वरूपात्मा, श्रीकृष्णः काल-शासनः।।१६
रमा - सर्व - करी - मन्त्रः, रामचन्द्र-मनु-व्रतः। राघवो भाग्यवान् वीरो रण-मध्ये जय-प्रदः।।१७
रमा संघेन संरम्भा, रमा - पूजा सदा-प्रियः। रमा-हास्य स्व-हासी च, रमा-सख्यैक-सुन्दरः।।१८
रमा - विधान - सम्पन्नो, रमा-नन्दन-कारकः। रमा - सर्व-परिप्रोता, रमा-कारण-कारणः।।१९।।
रमा - मान - प्रकाशी च, रमा-ज्ञान-विशारदः। रमा-लेखन-लेखः च, रमा-वेला रमा-पतिः।।२०
रमा - सङ्कष्ट - हर्त्ता च, नृसिंहो भक्त-वत्सलः। रमा सर्वतः सहितो, तस्याज्ञा-परिपूर्णतः।।२१
रामचन्द्रश्चन्द्र लक्ष्मी, रमा-चर्चित - पादपः। रमा-लोक-विलासी च, रमा रामस्य सर्वदा।।२२
रमा - सुधर्म - कर्मा च, रमा - सर्वार्थ-साधकः। रमा कीट-पतङ्गाद्या, रमा सर्व-मिदं जगत्।।२३
रमा - पाद- महा-पुण्य-मयो रामो धुरन्धरः। रमा-प्रवीणो विश्वात्मा, सर्वात्मा विश्व-पूजितः।।२४
रमा-स्थावर - रूपो च, रघुवंशेऽति-निर्मलः। रमा - प्रसाद-सहितो रमा - चञ्चल - चञ्चलः।।२५

रमा-भरण-भूतात्मा, रमा-पोषण - कारकः। रमा - पूर्णितो पूर्णात्मा, रमा - वाराह-संयुतः॥२६
रमा-कूर्मेण-सहितो, रमा - मत्स्य - समन्वितः। रमा - नृसिंह-सहितो, रमा-वामन-संयुतः॥२७
रमा रामेणा - सहिता, रमा कृष्ण-परायणा। रमा बौद्ध-स्वरूपा च, रमा कल्कि-स्वरूप-धृक्॥२८
रमा-विष्णु-स्वरूपात्मा, रमा रामः सदा-गतिः। रमा गति-स्वरूपात्मा, रमा - संसर्ग-सङ्गमः॥२९
रमा-प्रधान-मानसो, रमा-सर्वेश्वरो हरिः। रमा - शरीर-वासी च, रमा - विज्ञान-दर्शकः॥३०
रमा-तत्त्वोपदिष्टा च, रमा-मन्त्र-परायणः। रमा - भोग-प्रदाता च, रमा - दुःख-विमोचकः॥३१
रमा-सुरेन्द्र-चर्चितो तु, रमा मानस-मानसः। रमा-तर्पण-तृप्तो च, रमा - गाथाऽरुणा-कृतिः॥३२
रमा-गौरि - मयी - मूर्त्तिः, रमा-श्याम-स्वरूपिणी। रमा पीत-स्वरूपा च, रघुनाथो पुरातनः॥३३
रमा-करो रमा-दान्तो, रमा-सत्त्वो रमा-छविः। रमाऽऽधारो महा-वीरो, रमा-अव्यक्त-दर्शनः॥३४
रमा-तत्त्वे परिज्ञानी, रमा - राज्यावहारकः। रमा-रेवा-तटे धीरो, राम-मन्त्र - जपोत्कटः॥३५
रमा-सुरेन्द्र-वन्द्यो च, रघुः सर्वाङ्ग-सुन्दरः। रमा - आब्रह्म - संयुक्ता, राघवस्य प्रिया सतिः॥३६
रमा यज्ञ - मयी मूर्तिः, रामचन्द्रस्य सङ्गतिः। रमा-रूपी रामचन्द्रो, पर-ब्रह्म-स्वरूपकः॥३७
रक्त - चन्दन - लिप्ताङ्गो, रक्त - माल्यानुलेपनः। रक्त-वस्त्र-विलासी च, राघवो रघु-पुङ्गवः॥३८
रक्त-पुष्प - प्रियो रामो, वेद-विद्या-विशारदः। रमा सेषा-करी यस्य, सत्य-सङ्गः प्रतापवान्॥३९
राजाधिराजो भगवान्, चतुर्धा मूर्ति-धारकः। राजेन्द्रो भव-हर्त्ता च, राक्षसेन्द्र - वर-प्रदः॥४०
राज-कीर्त्तिर्लोक - मूर्त्तिः, रामः सत्य-पराक्रमः। रमा यस्यार्ध - देहस्था, रामो घोराघ-मर्दनः॥४१
राघवेन्द्रो वीर-भद्रो, रण-कर्कश - कर्कशः। राकिन्याद्या - महा-शक्तिः, सेव्यमान-पदाम्बुजः॥४२
रमा-रमिण्या - सर्वेशो, महाराजो महा-द्युतिः। राज्यदो भक्त - भक्तानाम-भक्ताना च किङ्करः॥४३
रति - प्रियो रति - नाथो, रागी राग-विशारदः। रवि-शशि-चरो भद्रः, ग्रह-रूपी जनार्दनः॥४४
रमा-कला रमा-क्लिन्नो, रमा-भाग्यो रमाऽङ्गदः। राम-भवो भवो भीमो, भय-भीता-विनाश-कृत्॥४५
रमा - क्रियो रमा-वीर्यो, सर्व-धर्मैक-साधकः। रक्त-पान-प्रियो रामो, रक्त-पान-करः प्रभुः॥४६
रक्त - मांस-प्रियो वीरो, नारायण-स्वरूपकः। रक्तास्थि-चर्वको विद्वान्, दीना-नाथो दिन-प्रभुः॥४७
रमा - रक्तेश्वरो शुद्धो, रामश्चैतन्य - चेतसः। रमा - अपूर्व-कर्मज्ञो, धर्म-कर्म-प्रवर्तकः॥४८
रामो विश्वस्य कर्त्ता च, रामो विश्वस्य नन्दनः। रामो विश्वस्य लुप्ता च, रामो विश्व-कुलान्तकः॥४९
रामो विश्वस्य भर्त्ता च, रामो राज्याधिपेश्वरः। रामो जगद्धितो वीरो, रामः सर्वार्थ-साधकः॥५०
रामो विरामो विरजो, कौशल्या-नन्दन-वर्धनः। रामः सुरा-तृप्ति-कर्त्ता, रामो मांसस्य भक्षकः॥५१
रामः श्रीशाम्भवः साक्षात्, श्रीसीता शाम्भवी परा। रामश्चक्र-प्रचारी च, रामस्त्रैलोक्य-व्यापकः॥५२
रामः सदा-शिवो मूर्त्तिः, काल-मूर्त्तिर्दिगम्बरः। रामः कृपा-करो देवो, विश्व-व्यापी निरञ्जनः॥५३
रामो निरामयो नित्यो, नित्य-सर्व-गतोऽव्ययः। रामो वायु-स्वरूपात्मा, रामाकाशैक-रूपकः॥५४

रामो धरा-मूर्त्ति-रूपो, रामः कालान्तको हरिः। रामो विभीषण-श्रीदः, पर-ब्रह्म-मयोदितः॥५५
रामो राक्षस - हन्तारो, राक्षसानां कुलान्तकः। रम्यमान-पदाम्भोजः, रमते सकलं जगत्॥५६
रुक्मिणी-प्रिय-कर्त्ता च, रुक्मिणी-मनसेप्सितः। रुक्मिणी चार्थ-दाता च, रुक्मिणी च लभो हरिः॥५७
रुक्मिणी-सिद्धिदः सिद्धो, सिद्धि-साध्यादि-वन्दितः। रुक्मिणी-प्रिय-भाग्यश्च, रुक्मिणी-भाग्य-वर्धनः॥५८
रुक्मिणी-भक्ति-भक्तो च, रुक्मिणी-सौख्य-दर्शकः। रुक्मिणी-श्री-स्वरूपा च, रुक्मिणी-प्राण-नायकः॥५९
रुक्मिणी-भोग-भुक्तश्च, रुक्मिणी-भग-तर्पणः। रुक्मिणी-दुःख-हर्त्ता च, रुक्मिणी-दिव्य-दर्शनः॥६०
रुक्मिणी-रूप-रूपा च, स्त्री-रूपा च पतिव्रता। रुक्मिणी-सङ्ग-सङ्गा च, रामो नारायणोऽव्ययः॥६१
रुक्मिणी-राज्य-दाता च, रुक्मिणी-वाक्य-सिद्धिदः। राधाऽऽराधित-वित्तात्मा, राधा-वन्दित सर्वदा॥६२
राधा-नाम-सदाऽऽनन्दः, राधा त्रैलोक्य-मोहिनी। राधा-सिद्धि सु-निष्ठा च, राधा-भक्ति-रतो रघुः॥६३
राधा - रूपी रामचन्द्रो, राधा-मोहन-मोहनः। राधा-मन्त्र-स्वरूपा च, श्रीमान्-दाशरथिः प्रभुः॥६४
राधा - सुख-निधाना च, रामो विश्वस्य मोहनः। राधा-प्राण-तृप्ति-करो, राधा-कर्म-प्रचारकः॥६५
राधा - सत्य-व्रताधीनो, राम-नाम सदा-गतिः। रकारः सर्व-देवानां, साक्षात् कालानलः प्रभुः॥६६
रकारः सर्व - देवानां, तेज - पुञ्जः सनातनः। रकारः सर्व-भूतानां, जीव-रूपी जनार्दनः॥६७
रकारः सर्व - जीवानां, सर्व-पापस्य दाहकः। रकारः सर्व-सौख्यानां, सिद्धिदः तु पुरातनः॥६८
रकारः सर्व-विद्यानां, वेदस्तत्त्व-सनातनः। रकारः सर्व-साध्यानां, साधकोऽनन्त-रूप-धृक्॥६९
रकारः सर्व - भूतानां, व्याप्य व्यापकमीश्वरः। रकारोत्पद्यते नित्यं, रकारो लीयते जगत्॥७०
रकारो जायते ब्रह्मा, रकारो जायते हरिः। रकारो जायते शम्भुः, रकारः सर्व-शक्तयः॥७१
रकारो निर्विकल्पश्च, शुद्ध - बुद्ध सदाऽव्ययः। रकारः सर्व-कामश्च, परिपूर्ण-मनोरथः॥७२
रकारः सर्व - दुष्टानां, नाशको रघु-नायकः। रकारः सर्व-सिद्धीनां, स्मरणात् दायको गुरुः॥७३
रकारो धर्म-कामानां, मोक्षश्चार्थैक-सिद्धि-कृत्। रकारः सर्व-सत्त्वानां, महा-मोद-मयः स्वराट्॥७४
राम - हास्य - करी माया, रकारो वसते सदा। राम-कीर्त्ति-करी माया, माया राम-यशस्करी॥७५
राम - तेज - करी माया, सर्व-कालेषु सर्वदा। राम-राज्य-करी माया, राज-राज-मयो हरिः॥७६
राम - भोग - करी माया, काल-काले निरन्तरम्। राम-दुर्गम-हन्ता च, राम-सौभाग्य-सुन्दरः॥७७
राम-सर्वार्थ-दाता च, भगवान् भव-भञ्जनः। राम-नाम सदाऽऽनन्दो, राम-नाम सदा-गतिः॥७८
राम-नाम सदा-तुष्टो, राम - नाम-स्वरूपकः। राम-नाम-परा वेदाः, राम-नाम सदा-शुचिः॥७९
राम - नाम - परा यज्ञाः, राम-नाम-परो ध्वनिः। राम-नाम-परं बीजं, राम-नाम-परं जगत्॥८०
रामो उदार - कर्मा च, रामान्तं च सकलं जगत्। मो दया-करो दीर्घो, दुःख-दारिद्र्य-मर्दनः॥८१
राम - नाम परं ज्ञानं, विश्वं रामस्य चाश्रयम्। रामात् पर-तरं नास्ति, कार्य-कारण-गौरवम्॥८२
रामो जपो-निधिर्देवो, दीर्घ-नेत्रो द्युतिच्छदः। रामः शोकस्य भोक्ता च, राज-राजो धनाधिपः॥८३

रामो रण-धरः श्रीमान्, चाप-तूणीर-पूर्णतः। रामः पराक्रमी कामी, काम-देवस्य पालकः॥८४
रामो हरः पार्वतीशो, स्मर्यन्ते च दिवा-निशम्। राज-योगस्य सिद्धीनां, राम राजेश्वरोऽभवत्॥८५
रकारादीनि नामानि, शृण्वतो मम पार्वति! मनः प्रसन्नतामेति, राम-नामामि-शङ्कया॥८६
रामः सुरेन्द्रो इन्द्रश्च, नारदाद्या महर्षयः। रामस्सेवक - सेव्यश्च, राघवो विश्व-राघवः॥८७
राम - स्वरूपा रामात्मा, रामः प्राण-पति-प्रियः। रामः कृपा-करी मूर्तिः, रामभद्रो जय-प्रदः॥८८
राम - नाम सदा सेव्यो, रामाचार्यो मुनीश्वरः। रामः प्रीति-कृपा-सिन्धुः राम-नाम धन-प्रदः॥८९
राम - नामो महा - वीर्यो, पूर्ण-पुण्य-विवर्धनः। रङ्ग-तङ्गश्च कृत्यात्मा, रेणुका-पार्थ-दायकः॥९०
रवीन्द्रो हरिः रघु-वरो, राज-राजो महा-भुजः। रविः ध्यानं रविः पूजा, रविः मूर्ति-सनातनः॥९१
रविः सर्वस्य दाता च, तेज-पुञ्ज-मयः पुमान्। रविः काल-निधिः साक्षात्, कष्ट-भ्रष्टस्तपः-क्रियः॥९२
रविः कैवल्य - वर्णा च, रविस्तिग्रोग्र-वर्चसः। रविर्नित्य - गतो ध्येयो, रविः स प्रिये! वदा॥९३
रविर्हर्षा रविः कर्षा, रविर्गोशारविर्हुतः। रविर्दाता रविर्भोक्ता, रविर्लोक - पितामहः॥९४
रविर्मूर्त्तिषु च सर्वेषां, देवानामालयं परम्। हविर्हवी महा - प्राज्ञो, रमेशः पारमार्थिकः॥९५
ऋक्ष-सख्यो ऋक्ष-भृत्यो, ऋक्ष-मन्त्री-कृतः प्रभुः। ऋक्ष-राज्य-प्रदो ऋक्षो, ऋक्षाणां पालनोद्यतः॥९६
ऋक्ष - राज - वधोपेतो, सुग्रीवस्यार्थिदो विभुः। राज-राजेश्वरो विष्णुः, राज-राजेश्वरी क्रिया॥९७
राज-चक्र - प्रवासी च, नष्ट-राज्यार्थी सिद्धि-कृत्। राज-राजाधि-राजेशो वीरः, सत्य-प्रताप-वान्॥९८
राज-सेवा - करो जिष्णुः, इन्द्रः सर्वाऽरि-बलेष्टदः। रुरु-धर्म-परीधानो, रौरवाघ-हरो हरिः॥९९
राजधानी राज-कामी, महा-राजो मुनीश्वरः। राज-प्रियो राज्य-भोगो, रजो-गुण-गुणार्चितः॥१००
रघु-वंशी रघु-श्रेष्ठो, राघवो ज्ञान-विग्रहः। रामो रमा-प्रियो नित्यो, मुनीनां मानसाधिपः॥१०१
रामो नित्य - निजानन्दो, रामो भक्ते दृढ़-व्रतः। राजितः सर्व-सर्वाङ्गो, राजत-केयूर-कुण्डलः॥१०२
तूण - तूणीर-वाणाश्च, राजचाप-धरो विभुः। जगच्छविः कृपा-सिन्धुः, नीराजित-पदाम्बुजः॥१०३
राज - सत्येश्वरो वीर्यो, विराजा सर्व-दुःखहा। रिक्त-भक्त-प्रसन्नात्मा, रिक्तासक्तः वर-प्रदः॥१०४
रिक्त-प्रियो रिक्त - मार्गो, रिक्तार्थैक -विमर्दनः। रिक्त-सेवा रिक्त-वर्गो, रिक्त-स्वभाव-भावनः॥१०५
रिक्त-कर्त्ता रिक्त-छेता, रिक्त-विश्व-प्रियंवदः। रिक्त-धर्मा निवासी च, सर्वाशा-परिपूरकः॥१०६
रिक्त - वर्षा रिक्त - कर्मा, रिक्त-धर्म-बहिष्कृतः। रिक्त-सूक्तो रिक्त-विद्या, धनुर्विद्या-धरोधरः॥१०७
रिक्त - वेद-विधानेन, ऋग्वेदस्य प्रियो बलः। रिक्त-शास्त्र-प्रतिज्ञा च, रिक्तारिक्तोज्ज्वलः प्रभुः॥१०८
रिक्त-पूज्यो रिक्त-सेव्यो, नित्य-रिक्तो तपस्विनः। रामः परात्मा भगवान्, स भाग्यो भाग्य-वर्धनः॥१०९
राम - कमल - पत्राक्षो, रामस्तत्त्व-प्रकाशनः। रामः शुभार्चितो नित्यो, कैवल्यागम-निष्ठितः॥११०
रामः सुग्रीव-वाल्मीको, रामो वाल्मीकि-पूजितः। रामो निरामयो देवो, जाम्बवान् भगवान् भवः॥१११

राज - सेवा-निवासी च, राज-कर्म-मनु-व्रतः। राजत-कटक-धारी च, विश्व-रूपी जनार्दनः॥११२
रामो विद्या-निधिः कान्तो, काक-पक्ष-धरो बुधः। राक्षसारिर्ब्रह्म-बन्धुः, परं-ब्रह्मेन्द्र-सत्-कृतः॥११३
रामो इच्छा-प्रचारी च, भगवान् भूत-भावनः। रामात्मा परमात्मा च, विश्व-रूपः प्रियान्वितः॥११४
रामो विरामो वैराग्यो, महा - विज्ञान-भैरवः। कुकर्म-हर्त्ता च रामः, श्रीदः क्रियार्थ-कृत्॥११५
रामः संसारिणां साध्यं, सौख्यदः शरणार्थिनः। रामो धरा-पतीनां च, नीति-रूपी सहस्र-पात्॥११६
राक्षसोऽव्यक्त-मूर्त्तीश्च, भूत-भव्य-भवः परः। रीति-नीति-रतो धीमान्, उग्रसेनो प्रति-प्रदः॥११७
ऋण - भय - विनिर्मुक्तः, करुणा-मय-शङ्करः। रामो गण-पतिर्गव्यो, सिद्धि-बुद्धि-समन्वितः॥११८
रामो भैरव-मूर्तिश्च, रामो विश्वस्य दर्पणः। रामः श्री-काम-भूतात्मा, रामो दिक्-मण्डलावृतः॥११९
रामो निर्वाण-वर्णश्च, निर्वाणार्थ-प्रबोधकः। रामः श्री-सर्व-नैमित्यः, रामो नित्य-ध्रुवो ध्रुवः॥१२०
रामो द्रव्य-मयो गम्यो, रामः पाताल-नायकः। रामो ब्रह्माण्ड-मध्यस्थो, गो-ब्राह्मण-हिते रतः॥१२१
रामो द्वितीयः सम्पन्नो, निवासी गहनो गुहः। रामो निष्कूट-रूपात्मा, निष्कूटानां भयङ्करः॥१२२
रामो भीरु - मयो गम्यो, देवारिर्भय-वर्धनः। रामो तरङ्ग-सहिता, रामा-भार्या-रति-प्रियः॥१२३
रमा-केलि - कुलाचारो, रमाऽऽचार-गुरोर्गुरुः। रश्मि-प्रिय-करो रम्यो, रश्मि-दीप्ति-करः पुमान्॥१२४
रामस्सन्तुष्ट - विश्वात्मा, रागो गान-शुभाननः। राग-सारो राग-वर्ती, रागी रागो विरागहा॥१२५
राग-सेवा राज-नीतिः, रतिदो गतिदः स्वरः। राजिका भोजनासक्तो, राजिका-गन्ध-सत्-कृती॥१२६
राजिका-विजया-धीरो, राजिका-शाक-भोजनः। राजिका-शत्रु-हर्त्ता च, राजिका-निन्दकान्तकः॥१२७
राजिका - होम-सन्तुष्टो, रामचन्द्रो दया-निधिः। राजिका-दर्शन-प्रीतो, राजिकायाः लघु-कृतः॥१२८
राजिका-भञ्जको भीमो, राजिका-भाव-सेवकः। राजिका-व्रत-दीप्ताङ्गो, राजिका-भाग्य-वर्धनः॥१२९
राजिका कुल-विद्या च, रामचन्द्रो महेश्वरः। राजिका-स्तम्भनोत्सर्गो, राजिता भक्त-रक्षिता॥१३०
राजिका-मुख्य-वीर्या च, राजिका-शक्ति-सम्पुटा। राजिका-सङ्ग-सङ्गाश्च, राजिका-चन्दनोद्यता॥१३१
राजिका-विश्व-विश्वा च, राजिकारिर्विनाशनः। राजिका-पुष्प-पुष्पा च, रामचन्द्र-सदा-प्रियः॥१३२
राजिका-सर्व-वश्या च, राजिका-भीति-भञ्जनः। राजिका सौम्य-सौम्या च, राजिका-दुष्ट-खण्डनः॥१३३
राजिका-क्रूर-कर्मा च, राजिकाऽनुग्रह - विग्रहः। राजिका-पत्र-पद्मा च, महा-राजो धुरन्धरः॥१३४
राजिका-तीव्र-वेगा च, राजिका - वासकीष्टदः। राजिका-मोहनो देवो, देव-देवो हरीश्वरः॥१३५
राम - नाम - परो मन्त्रो, राम-नाम-परो क्रिया। राम-नाम-परो यज्ञः, राम-नाम-परं जपः॥१३६
राम - नाम-परे सारं, राम-लक्ष्मी-समावृतः। रामो अभय-कर्त्ता च, रामो अरि-विनाशनः॥१३७
रामो जले चान्तरिक्षे, रामो मोद-प्रमोद-कृत्। रामश्शुभानि कर्माणि, रामोऽपि अशुभ-नाशनः॥१३८
रामो मनोभवो देवो, मनो-मय जगन्मयः। रामो दामोदरो श्रीशो, ऋषीकेशो महा-बलः॥१३९
रामः माधवस्सर्वो, श्रीदः पुण्य-जनावृतः। रामो दैत्यारिः सर्वज्ञो, नील-लोहित-लोचनः॥१४०

रामो महा-विघ्न-हरो, रामः श्री-त्रिपुरान्तकः। रामो स्वयम्भू ऋषी-केशो ईशः कल्मषापहः॥१४१
रामः पीतारुणा-श्यामो, सर्वदाऽऽनन्द-वर्धनः। रामो साक्षात् कृत-ध्वंसी, व्योम-केश-स्वरूप-कृत्॥१४२
रामः सर्वच्छविः कान्ता, शान्तो विश्वस्य शासनः। रामश्शर्वाङ्गी महा-सेनि-ज्ञानदो महा-भुजः॥१४३
रामो हरः स्मरो नामः, सर्वदा धर्म-वर्धनः। रामो स्वयं-वीति-होत्रो, रामः साक्षाद् धनञ्जयः॥१४४
रामः कृशानु-रेता च, रामः पिङ्गल-पाटवः। रामः स्वयं सुर-श्रेष्ठो, राम एव त्रिलोचनः॥१४५
राम एव महा-वीर्यो, रामो दिव्य-शुचिर्व्रतः। राम एव निजं नित्यं, बुद्धीन्द्रिय-मना-मयम्॥१४६
राम एव महा-व्यासो, राम एव महा-बलः। राम एव निजं ब्रह्म, राम एव महा-तपः॥१४७
राम एव महा-हंसो, रामात्मा गोचरो नरः। रामो नित्य-निराकारो, रामो भरत-रूपकः॥१४८
रामस्त्रैलोक्य - मध्यस्थो, रामः सत्य-वसुन्धरः। रामः कुमार-रूपात्मा, रामः पाखण्ड-भञ्जनः॥१४९
रामो मिथ्या-विनाशी च, रामः सत्य-प्रवर्तकः। रामो विश्वास-वासी च, सत्य-वासी सरोरुहः॥१५०
रामः सर्व-गुहा-गम्यो, भक्तानां मानसेष्टदः। रामः प्रभाकरो ज्येष्ठो, ईप्सितार्थ-प्रदर्शकः॥१५१
रामस्तालाङ्क - भू-भार-हारणो मद - भञ्जनः। रामः प्राण-प्रपानश्च, रामोदान-समानकः॥१५२
रामो नागश्च कूकलो, देव-दत्तो रमेश्वरः। रामो धनञ्जयः सत्यो, रामः पञ्च-जनात् वयः॥१५३
रामः क्रूरस्य क्रूरात्मा, वैरामः पुरुष-प्रियः। रामश्छल-निहन्ता तु, रामो दिव्यान्न-दायकः॥१५४
रामो दिव्याङ्गना - भोगी, रामो ज्ञान-गतां वरः। रामो निज-परो मूर्त्तिः, मानवाकृतिरीश्वरः॥१५५
रामः श्रीतक्षको तीव्रो, महा-सत्त्वेति चञ्चलः। रामो द्वय-हृदा साक्षी, सहिष्णुर्जगदीश्वरः॥१५६
रामो वीर - मतां श्रेष्ठो, सर्व-धर्मेषु वन्दितः। रामः श्री-पुरुषो छन्दो, क्षेत्रज्ञोऽक्षरमुत्तमः॥१५७
रामो अपां निधिः सौम्यो, भगवान् कुम्म-सम्भवः। रामो अशोक-मूर्त्तात्मा, भक्तानां शोक-नाशनः॥१५८
रामो मत्स्य - स्वरूपात्मा, सर्व-सिद्धि-प्रदो गिरः। रामो महोक्षो वेदात्मा, अनुकूल-प्रदो भवः॥१५९
रामः सर्वाङ्गमानन्दी, नित्य - लक्ष्मी - विलासदः। इतीदं कथितं देवि! राम-नाम-सहस्रकम्॥१६०

॥फल-श्रुति॥

गोपनीयं प्रयत्नेनं, पठनीयं परात् परम्। न देयं कस्य देवेशि! न वाच्यं कस्यचित् प्रिये!१
ये ये प्रयोगा तन्त्रेषु, तै तैर्यत् साधयेत् फलम्। तत् सर्वं सिध्यति क्षिप्रं, राम-नामैव कीर्त्तनात्॥२
रोगार्त्तो मुच्यते रोगात्, बन्धो मुच्येत बन्धनात्। भीतो भयात् प्रमुच्येत, देवि! सत्यं न संशयः॥३
स्त्री - हत्या बाल-घाती च, गौ-हत्या ब्रह्म-शासनः। सर्व-हत्या-क्षयं यान्ति, पाठ-मात्रेण पार्वति!॥४
सोऽपि गुर्वङ्गना-गामी, तथा विश्वास - घातकी। पाठ-मात्रेण देवेशि! सर्व-पाप-क्षयो भवेत्॥५
जीव - घाती प्राण-हर्त्ता, धर्म-नष्टस्तु यो नरः। पठनात् ब्रह्म-सायुज्यं, प्राप्नुयात् नात्र संशयः॥६
अयोनि - गामी यो मूढो, ब्रह्मण्या सह सङ्गमी। श्रीराम-नाम-साहस्रं, पठनात् मुक्त-पातकः॥७
कु - योनि - मैथुनाद् दुष्टो, दुष्ट-दुर्बुद्धि-चेतसः। एकावृत्त्या महेशानि! सर्व-पापैः प्रमुच्यते॥८

इतीदं राम - साहस्रं, दशं - वारं पठेद् यदि। स गच्छेत् वैष्णव-लोकं, वायुर्नावमिवाम्भसि।।९
भूत - प्रेत-पिशाचाद्या, वेताला सिद्ध-चेटकाः। कूष्माण्डा राक्षसा घोरा, भैरवाः ब्रह्म-राक्षसाः।।१०
श्रीराम-नाम-ग्रहणात्, पलायन्ते दिशो दश। श्रीं ह्रीं रां ल्की नमः स्वाहा, एवमष्टाक्षरो मनुः।।११
जपेत् सहस्र-नामान्ते, मोहयेत् सकलं जगत्। यत्र यत्र जपेत् धीरो, शुचि-र्भूत्वैक-मानसः।।१२
तत्र तत्र जपो भूयात्, नात्र कार्या विचारणा। पौर्णमास्याममावास्यां, संक्रान्तौ ग्रहणेष्वपि।।१३
एकादश्यां नवम्यां वा, सावधाने तु साधकः। पठेत् सहस्र-नामाख्यं, रक्षोऽत्र मोक्षस्य साधनम्।।१४
मोहनं सर्व-जीवानां, भूयात् राम-प्रसादतः। एकावृत्त्या लभेत् लक्ष्मीं, द्विरावृत्त्या जगद्-वशी।।१५
त्रिरावृत्त्या पठेन्नित्यं, षट्-मासात् स शिवो भवेत्। चतुर्वारं पठेन्नित्यं, पुत्रवान् कीर्तिमान् भवेत्।।१६
पञ्च-वारं पठेन्नित्यं, दिव्य-कायो भवेन्नरः। षड्-वारं यः पठेत् नित्यं, सर्व-सिद्धीश्वरो भवेत्।।१७
सप्त-वारं पठेत् स्तोत्रं, वाचा-सिद्धिः प्रजायते।।१८
अष्ट-वारं पठेद् देवि! षडङ्गाभ्यां समो गतः। साक्षात् श्रीरामचन्द्रस्य, दर्शनं लभते ध्रुवम्।।१९
तुलस्याश्वत्थयोर्मध्ये, शालिग्रामस्य सन्निधौ। एकाहारी भूमि-शायी, जित-क्रोधी जितेन्द्रियः।।२०
नित्य-भक्त्याऽर्चयेद् विष्णुं, स मुक्तः सर्व-पातकैः। श्रीरामं च हनूमन्तं, सुग्रीवं च विभीषणम्।।२१
अङ्गदं जाम्बवन्तं च, स्मृत्वा पापैः प्रमुच्यते। राज - द्वारे च संग्रामे, नदी-नद-समुद्रगे।।२२
दुर्भिक्षे विग्रहे घोरे, श्मशाने च चतुष्पथे। यत्र यत्र भये प्राप्ते, तत्र तत्र पठेद् ध्रुवम्।।२३
विजयं सर्वमाप्नोति, दुर्लभं सुलभं भवेत्। सत्यं सत्यं पुनः सत्यं, गोप्तव्यं पशु-सन्निधौ।।२४
तव भक्त्या मया ख्यातं, नाख्येये यस्य कस्यचित्। इह-लोके सुखी भुक्त्वा, परे मुक्तिर्भविष्यति।।२५
तत्र रूपैः विविधाकारैः, सेव्य-मानं परात् परम्। विश्वावसुं चित्रकेतुं, चित्रसेनाद्यलूककम्।।२६

श्रीहरिः ॐ हरिः, रां रां हरिः, ल्कीं ह्रीं स्वाहा।

।।श्रीब्रह्म-यामले सृष्टि-प्रशंसायां उमा-महेश्वर-संवादे रकारादि श्रीराम-सहस्र-नामं।।

{सम्वत् १८६८ की पाण्डुलिपि के आधार पर}

'र'-कार

रकारः सर्व-देवानां, तेज - पुञ्जः सनातनः। रकारः सर्व-भूतानां, जीव-रूपी जनार्दनः।।
रकारः सर्व-जीवानां, सर्व-पापस्य दाहकः। रकारः सर्व-सौख्यानां, सिद्धिदः तु पुरातनः।।
रकारः सर्व-विद्यानां, वेदस्तत्त्व-सनातनः। रकारः सर्व-साध्यानां, साधकोऽनन्त-रूप-धृक्।।
रकारः सर्व-भूतानां, व्याप्य व्यापकमीश्वरः। रकारोत्पद्यते नित्यं, रकारो लीयते जगत्।।
रकारो जायते ब्रह्मा, रकारो जायते हरिः। रकारो जायते शम्भुः, रकारः सर्व-शक्तयः।।
रकारो निर्विकल्पश्च, शुद्ध - बुद्ध सदाऽव्ययः। रकारः सर्व-कामश्च, परिपूर्ण-मनोरथः।।

उल्टा नाम— 'मरा' का रहस्य

❖ श्रीयुत तेजभानु सिंह

जान आदि-कवि नाम-प्रतापू। भयउ सुद्ध करि उलटा जापू।।
उलटा नाम जपत जग जाना। वाल्मीकि भये ब्रह्म-समाना।।

उपर्युक्त चौपाइयों में **'उलटा जापू'** शब्द पर बहुत-सी कल्पनाएँ लोगों के हृदय में उठा करती हैं कि **'उलटा जप'** क्या है? **सप्तर्षियों** ने **वाल्मीकि जी** को **'उलटा जप'** का ही उपदेश क्यों किया और ऐसे अनधिकारी को उपदेश ही क्यों दिया? पात्र को उपदेश देना विहित है, इत्यादि-इत्यादि!

सप्तर्षियों से **वाल्मीकि जी** को उलटा ही उपदेश मिला, इसमें किञ्चिन्मात्र शङ्का का स्थान नहीं, क्योंकि **'अध्यात्म-रामायण'** में स्पष्ट लिखा है— **''इत्युक्त्वा राम ते नाम, व्यत्यस्ताक्षर-पूर्वकम्। एकाग्र-मनसा चैव, मरेति जप सर्वदा।''** अर्थात् ''यह कह कर मुनि-जनों ने हे राम जी! आपके नाम के अक्षरों को उलट कर अर्थात् **'मरा-मरा'** जपने के लिए मुझे उपदेश किया।'' इससे सिद्ध होता है कि **'मरा-मरा'** जपने का ही मुनियों ने उपदेश दिया।

अब शङ्का हो सकती है कि **'मरा-मरा'** जपने को क्यों कहा? शास्त्रों के अनुसार वह नराधम अहर्निश हिंसा-रत रहता था, इससे निर्विवाद तमो-गुण-युक्त था। उस दुरात्मा के तमो-गुणानल को **'राम'**-शब्द में **'म'**-कार, जो **'चन्द्र'**-बीज है, वही शान्त-सुशीतल कर सकता था, जैसे कि भगवान् भास्कर की उत्तप्त किरणों द्वारा जगती-तल तपित होकर निशागम में निशानाथ की सुशीतल मरीचिका द्वारा शीतलता प्राप्त कर अपनी अशान्ति को नष्ट करता है। इसी ध्येय से मुनियों ने उस कलुषितात्मा को **'म'-कार— 'चन्द्र'-बीज** द्वारा ही शान्त करना श्रेष्ठ समझा। देखिए, **'महा-रामायण'** में शाङ्कर वचन है— **''मकारश्चन्द्र-बीजं स्याद्, यदपां परिपूरणम्। त्रैतापं हरते नित्यं, शीतलत्वं करोति च।''** अर्थात् **'म'-कार— चन्द्र-बीज** है, जो पानी का बढ़ानेवाला— सदैव **त्रि-ताप** को दूर कर शीतलता देता है।

किसी भी कार्य के आरम्भ में शान्ति की आवश्यकता है। **''अशान्तस्य कुतः सुखम्''** अर्थात् अशान्त को सुख कहाँ! पाप-सन्तप्त-हृदय **'म'-कार** के अभ्यास से सुख-शान्ति-मय होगा, इसी तात्पर्य से **'म-कार'** का प्रथमोच्चारण किया।

तत्पश्चात् **'र'-कार** का— **'अग्नि'-बीज** द्वारा उसके महा-पापों और अशुभ कर्मों को भस्म करने के उद्देश्य से उपदेश किया तथा रकारोत्तरवर्ती **'आ'-कार** के द्वारा (जो **'भानु'**-बीज है) हृदय में प्रकाश डालने के लिए उचित समझा। जैसा कि **'महा-रामायण'** में स्पष्ट लिखा है— **''रकारोऽनल-बीजं स्याद्, ये सर्वे वाडवादयः। चेतोऽमलं करोत्याशु भस्म कर्म शुभाशुभम्।**
आकारो भानु-बीजं स्याद्, वेद-शास्त्र-प्रकाशकः। विनाशयत्यसौ दीप्त्या, याऽविद्या हृदये तमः।''

भाव यह कि **'म'-कार** शीतल होने से **भक्ति-स्वरूप** है। बिना भक्ति के त्रि-ताप-सन्तप्त जीव को सुख-शान्ति नहीं मिलती। इसलिए मुनियों ने दूर-दर्शिता से **'म'-कार**—वर्ण को अधिक उपयुक्त समझ कर **'राम'-नाम-मन्त्र का उलटा— 'मरा'** का ही उपदेश किया। **'महा-रामायण'** में कहा है कि—

''जपतः-सर्व-वेदांश्च, सर्व-मन्त्रांश्च पार्वति! तस्मात् कोटि-गुणां पुण्यं, राम-नाम्नैव लभ्यते।''

अर्थात् **हे पार्वति! सम्पूर्ण वेदों का पाठ करने और सब मन्त्रों का जप करने से जो पुण्य होता है, उससे कोटि गुना पुण्य केवल 'राम'-नाम से होता है।** इस नाम की महत्ता इतनी अतुलनीय है कि इसको उलटा जपने से भी साधक ब्रह्मीभूत हो जाता है। अन्य मन्त्र उलट-फेर हो जाने से सिद्धि की कौन कहे, अनिष्ट-जनक होते हैं।

यही कारण है कि **अध्यात्म-रामायण** की टीका में **नागोजी भट्ट** ने **प्रणव— 'ॐ'** को **'राम'**-शब्द का रूपान्तर माना है और वर्ण-व्यत्यय कर **'राम'-शब्द** से **ॐ-कार** की सिद्धि की है।

अध्यात्म-रामायण की कथा से भी ये सभी बातें स्पष्ट होती हैं। **'अध्यात्म-रामायण'** में लिखा है कि **सप्तर्षियों** द्वारा वह पापात्मा अपने परिवारवालों के निकट इसलिए भेजा गया था कि परिवारियों में कोई उसके पापों का पाप-भागी भी होगा या नहीं? गृहवालों से पूछने पर तथा पाप में हाथ बँटाने को किसी के प्रस्तुत न होने पर वह मुनियों के चरणों में साष्टाङ्ग प्रणाम करता हुआ आर्त-वचनों से 'पाहि-पाहि' कह शरणागत हुआ और कहने लगा—**'हे दयालु गण! नरकार्णव में जाते हुए मुझे आप लोग कृपया बचा लें।'** दैन्य-भरे इस वचन को सुनते ही सहज करुणा-परायण मुनि-गण शरणागत-रक्षण-विधान में तत्पर हो गए और अन्योन्य मन्त्रणा कर **'पाप-दहन-मन्त्र'— 'मरा'** बतला दिया। सच है—

सन्त-हृदय नवनीत-समाना। कहा कविन पै कहैन जाना।।
निज-परिताप द्रवै नवनीता। पर-दुख द्रवहिं सु-सन्त पुनीता।।
गूढ़उ तत्त्व न साधु दुरावहिं। आरत अधिकारी जहँ पावहिं।।
सन्त-विटप-सरिता-गिरि-धरनी। पर-हित हेतु इनन्ह की करनी।।

'राम'-नाम-महिमा

बिना राम के भजन किए, पाया किसने आराम कहो।
राम कहो श्रीराम कहो, राम कहो श्रीराम कहो।।
राम-नाम अनमोल रतन है, गूँथि गले डालो माला।
हिय के अन्धकार हरने को, मार्तण्ड सम उजियाला।।
राम-नाम-मणि विषय-व्याल के, रोग-शोक हरनेवाला।
निर्बल के बल, निर्धन के धन, निराधार के रखवाला।।

।।ॐ श्रीगणेशाय नमः। ॐ दक्षिणामूर्तये नमः।।

'म'-कारादि श्रीराम-सहस्र-नाम महा-स्तोत्रम्

❖ परम पूज्य स्वामी हिमालय अरण्य जी की कृपा से प्राप्त

।।ध्यान।।

वामाङ्के भाति सीता स्मित-मधुर-मुखाम्भोज-नेत्रं विशालम्।
ध्याये तं रामचन्द्रं दशरथ-तनयं देहि मे भुक्ति-मुक्तिम्।।

।।मूल-पाठ।।

ॐ महा - रामो महा-राजो, महान्तो मनुजो मुनिः। मामो मान-हरो मारो, मधुरो मुर-मर्दनः।।१।।
मदनो मथुरा - नाथो, महा - नादो महाऽऽयुधः। मन्मथारिर्महा-मारी, महा-मारी-विनाशनः।।२।।
मधुरो मधुराकारो, मथुरालय - वास - कृत्। मधु - सूदनो मनोर्मर्त्यो, मनीषी मनुजेश्वरः।।३।।
मधु - त्रीतो मधु - रतो, माध्वीको मधुरो मधुः। मधु-वातो मधु-ऋतुः, मद-घूर्णित-लोचनः।।४।।
मधुरेको मधु - रिपुर्मधु - दैत्य - विनाशनः। मुरारिर्मुरकी मायी, मणि - कौस्तुभ-धारकः।।५।।
मन्द-स्मितो मन्द-गतिर्मुकुन्दो मदनेश्वरः। मुरली-नाद - सम्प्रीतो, मुरली - नाद - ह्लादितः।।६।।
मुरली - नाद - कुशलो, मुरली - नाद-विशारदः। मुरली-वादन-रतो, मुरली-ध्वनि-विमोहितः।।७।।
मालती-पुष्प-सम्प्रीतो, मालती-मालयाऽऽवृतः। मालती च सुगन्धाढ्यः, मालाकारो महा-द्युतिः।।८।।
मालती-वन-सम्प्रीतो, मालती-वन-पालकः। मुञ्ज-केशो महा-शान्तो, महा-दान्तो महोदरः।।९।।
मोक्ष - रूपो महोक्षश्च, मोक्षैक-फल-साधनः। मत्सरो मान-मथनो, मान-मत्सर-हारकः।।१०।।
महानुभावो मातीतो मा - पतिर्मधुर - व्रतः। मधु-वाता मही-त्राता, मही-भार-विखण्डनः।।११।।
महा - तत्त्वा महाम्मोधिर्महा - तत्त्व - परिग्रहः। महा-तत्त्व-मयी-मूर्त्तिर्महा-तत्त्व-परो मतिः।।१२।।
महा - तत्त्वालय - मनः, मनः-सङ्कल्प-वर्जितः। मनसाऽऽराधन-परो, मनसाऽऽराधने रुचिः।।१३।।
मद - मारिर्मनो - हारी, मदनो मदनान्तकः। मनोज्ञो मोहनो मोहो, महा-मल्लौघ-तारकः।।१४।।
मोहनो मुरली - धारी, मुकुटाङ्गद - मण्डितः। मयूर - ध्वनि-प्रह्लादो, मयूर-ध्वनि-मोहितः।।१५।।
मयूर - पक्ष - शिरश्चैव, मयूर - पक्ष - कान्ति-धृत्। मयूर-पक्ष-वपुषः, मयूर-रव-मोदितः।।१६।।
मरीचिर्दमनो - मुख्या, मरीचिर्दमनो - रुचिः। मरीचीशो मरीचिस्थो, मरीचि-स्थान-वर्चसः।।१७।।
मुरारिर्माधवो मल्लो, मधुसूदन - मन्दिरः। मनोहरो महाम्मोधिर्महा - मदो महा-वरः।।१८।।
मोद-रूपो महाऽऽनन्दो, महा-मन्धो महोषधो मुक्ति-रूपो मुक्ति-देयो, मुक्तेशो मुक्ति-नायकः।।१९।।
मुक्ति - प्रियो मुक्ति - राजो, मुक्ति - दायक-मानवः। मङ्गलायतनो-देवो, मानद-कर-सुन्दरः।।२०।।

मुक्तिकाऽऽभरणोपेतो, मुद्रिकाभिरलंकृतः। महा - भाग्य-प्रदो मन्दो, मन्द-स्मितः महोरगः॥२१॥
मत्स्य-रूपो मौली-धरो, मौञ्जी-कटि-विराजितः। महा-दम्भ-हरो मानो, माधवो मकर-ध्वजः॥२२॥
माया-मय-निरस्तायी, माया-मयः मलापहः। मत्स्यो मङ्गल-दाता च, महान्तो मह-मूर्त्ति-मान्॥२३॥
मालाकारो महेशानो, महेशो माहिषोयुधः। मुरारिर्मानदो मानो, महीशो मान - खण्डनः॥२४॥
मान-दाता मान-त्राता, मान-पाता महा-परः। मानी मौनी मान-दीप्तो, मानिनी च विशे स्थितः॥२५॥
मानिनी-मान-सम्प्रीतो, मानिनी-मोहने रतः। मनो - हरो मान - दण्डो, मुनि-साधन-तत्परः॥२६॥
मुचुकुन्दो महा - मोही, महीसुरः महोत्कटः। महोत्साहो महोत्पातो, मारीच-क्षोभ-कारकः॥२७॥
महा-क्षोभः महा-वृक्षो, महा-शिक्षो महा-मखी। मुदा-मयो मन्त्र-मयो, मन्त्र-वृक्षो महा-फलः॥२८॥
महा-धनो महाधीनो, मथुरा-मल्लभे मही। महा-नाथो म्लेच्छहा च, महा-हर्त्ता महा-यशाः॥२९॥
महा-बन्धो महानीशो, माया-मय मनो-मयः। मुनि-पुष्पो मुनीशस्थो, मुनि-पुष्पोपशोभितः॥३०॥
मुनि - पुष्प - प्रियो मित्रो, मुनि-पुष्प-महा-रुचिः। मुनि-पुष्प-समुद्भूतो, मुनि-पुष्प-समुत्सुकः॥३१॥
मुशली मूशला - धारी, मृत्युञ्जयः महा-क्रतुः। मख-वादी मदोद्धारी, मदका मीन-केतनः॥३२॥
मरुत्वान्मघवो माघो, मघा-नक्षत्र-मारुतः। मेनका - मञ्जु - घोषाढ्यः, मेरुर्मलय-वास-कृत्॥३३॥
मेनका - रूप - सन्तुष्टो, मेनकाऽऽलिङ्गने परः। मेनका-दान-सन्तुष्टो, मेनका-दान-तत्परः॥३४॥
मकार - भरणाह्लादो, मेनका-चुम्बने-रुचिः। मरुतो मारुतो मारो, मनीषी मानुषी-मणिः॥३५॥
माधवो मधुरा-कान्तो, महा-यज्ञो मही-सुतः। महा - शमो महा-नादो, महा-गर्वो महा-हरः॥३६॥
महाऽशनो महा-दान्तो, महा-कान्तो महा-मतिः। महाऽऽकारो महा-योगी, महा-तेजा महेश्वरः॥३७॥
मेघ - नादो मेघ - रूपो, मेघ - वृष्टि-निवारकः। मेघ-जीवन-हेतुश्च, मेघ-तुल्यो-मनोरथः॥३८॥
मेघ - श्यामो मेघ-वासो, मेघ-तुल्यो-महा-सुखः। महा-बलो महोल्लासो, महा-बल-पराक्रमः॥३९॥
महा - चन्द्रो महा-रुद्रो, महा-ब्रह्मा-प्रजापतिः। मणि-तुल्यो मणि-ग्रीवो, मणि-माला-विभूषितः॥४०॥
मणि-कान्ति-धृतो मत्तो, मणि-राजो मणि-प्रियः। महानेको महा-जीवो, मद-मान-विवर्जितः॥४१॥
मञ्जरी - रञ्जित - पदो मञ्जरी-पुष्प-रञ्जकः। मेघ - रूप-धरो मेघो, मेघ-नायक-नायिकः॥४२॥
माया - परो महानीशो, माया - पतिर्मरुत्-सखः। मनोरथ-विलासी च, मनोरथ-निवास-कृत्॥४३॥
मनोरथ - प्रदाता च, मनोरथ - महा - रथी। मख-रूपो मुनेमोख्यो, मख-रक्षण-तत्परः॥४४॥
मख - राजी मखाधीशो, मखेशो मख-नायकः। मख-पूर्णो महा-पूर्णो, मख-वासी मखेश्वरः॥४५॥
मख - धूम - विलासी च, मख-धूमो महान्तकः। महा-विराट् महीशी, मही-पालन-तत्परः॥४६॥
मही - मङ्गल - कर्त्ता च, मही-मङ्गल-मङ्गलः। मही-मङ्गल-दाता च, मही-मङ्गल-दायकः॥४७॥
महा - मङ्गलकारी च, महा-मङ्गल-पालकः। माङ्गल्य-शीलो मङ्गल्यं, माङ्गल्यं च मनोधिकः॥४८॥

माङ्गल्य - कारी माचारी, मृग-माङ्गल्य-कारकः। मातङ्गो मत्त-मातङ्गो, मातङ्गी-मान-रक्षकः॥४६॥
मातङ्ग - रूढो मधुरो, मत्त - मातङ्ग - मर्दनः। मधुराधरो मधु-रिपुर्मधुराधर-चुम्बनः॥५०॥
मधु - वादो मधु - रतो, माधुरो मधुराकृतिः। मधुर-व्रत-धारी च, मधुर-वृत्ति-परायणः॥५१॥
मधुर - वादो मनोह्लादो, मधु-नेत्रो मधु-प्रियः। मधु-दैत्य-विनाशी च मधु-दैत्य-विमर्दनः॥५२॥
मधु-वायो मधुर्नादो, मधु-रेखो मधु-श्रियः। मानिनी-मान-सन्तुष्टो, मानिनीनां च मोददः॥५३॥
मानिनीनां निवासी च, मानिनी-व्रत-तोषकः। मानिनीनां विलासी च, मानिनी-मान-मोचकः॥५४॥
मानिनी - रास - निरतो, मानिनी-मान-तत्परः। मकरन्द-प्रियो मित्रो, मकरन्द-निवासकः॥५५॥
मकरन्द - विहारी च, मकरन्दो महा-रविः। माधुर्यो मकरन्दश्च, मल्लिका-पुष्प-मण्डितः॥५६॥
मल्लिका-वन-सञ्चारी, मल्लिका-वन-पालकः। मल्लिकाभिरतो मल्ली, मल्लिका-भूषणे रुचिः॥५७॥
मीमांसा - मत्सर-हन्ता, मत्सरो मत्सराकृतिः। मुखरो मुखराधीशो, मुख्येशो मुख्य-नायकः॥५८॥
मख्य - दान-रतो माख्यो, मधु-कैटभ-नाशनः। मधु-कैटभः मही-पुत्रो, महीशो महि-धारकः॥५८॥
मही - पालो महा-वाली, मही-ब्रह्माण्ड-नायकः। मनसाऽऽराधन-परो, मनसा-साधने रतिः॥६०॥
मनीषो मत - चारी च, मनसा-पालने परः। मोर-ध्वजो मोर-पालो, मोर-ध्वजः महद्धनुः॥६१॥
महद्भूतो महत् - सेव्यो, महर्लोको महा-तपः। महच्छक्तिर्महद्-वाञ्छा, महा-कांक्षा मयूरकः॥६२॥
महर्लोक-गतो-हृष्टो, महर्लोक-फल-प्रदः। महर्लोक - निवासी च, महर्लोक - विहारकः॥६३॥
महा - रथो महानुज्ञो, महातत्त्वो महाशनः। मैधाचार्यो महाचार्यो, मुद्गलो मलयाचलः॥६४॥
मनो-वेगो मृगाधीशो, मृग-चर्म-धराम्बरः। मृग - मांस - रतो मृग्यो, मृग-माला-निषूदनः॥६५॥
मृग - मारीच - दमनो, मृग-मारीच-मुक्तिदः। मृग-मार्ग-गतो मन्दो, मन्द-गामी मताम्बरः॥६६॥
मृगाङ्गो मदमापन्नो, मृग - नेत्रो मृगेश्वरः। मृगाङ्ग - लेप - सन्तुष्टो, मृगाङ्गालेपने-रतः॥६७॥
मृगाङ्ग - भालको मृग्यो, मृगाङ्ग - मलयामदः। माया-निर्जित मायीशो, माया-निर्मित-विग्रहः॥६८॥
माया - परो महा - मायो, महा-मायापहारकः। माया-धारी मार्गशीर्षो, मघवा मघ-मासकः॥६९॥
मघवा - मान - मथनो, महानीशो महा-नखः। मरुत्व-मत्-प्रियो-बन्धुर्मघ-नक्षत्र-मो-पतिः॥७०॥
मघवा - त्रास - हारी च, मघवा-रिपु-नाशनः। मेखली मखली मेषी, मेष-मीनादि-राशयः॥७१॥
मेघ-छाया मेघ-माला, मेघ-माला-निवारकः। मेघ-स्वनो मेघ-राजो, मेघ-कान्ति-धरो-मलः॥७२॥
मेघ-वर्षी मेघ-करो, मेघावलि - निवारकः। मणि - प्रदो मानुषेशो, मानुषो मनुजाकृतिः॥७३॥
महा-वराहो मान्तस्थो मनः-सन्तोष-कारकः। मनो-रम्भो मान-दम्भो, मोदामोद-रतो मुदः॥७४॥
मोद-कृद् मोद-भोक्ता च, मोद-विद्या-विशारदः। मोद-कारी मोद-धारी, मुदितो मुदितायनः॥७५॥
मोदकान्ना - रुचिर्मुग्धो, मुद्गदो मूषिकावृतः। महर्लोकाचल - मलो, मल्ल-विद्या-विशारदः॥७६॥

महा - मल्लो महा-कल्पो, महानल्पो महाऽनलः। मलयाचल-सम्भूतो, मलयाचल-वास-कृत्॥७७॥
मलयाचल - वृक्षस्थो, मलयाचल - सेवितः। मलयाचल - सन्तुष्टो, मलयाचल-वन्दितः॥७८॥
मलयाचलो महोत्पातो, महदुत्पात - नाशनः। महदुत्पात - कारी च, महदुत्पाद-भक्षकः॥७९॥
महाचार्यो महा-कार्यो, मुनीनां मोक्ष-दायकः। मुनि-प्रियो मुनि-रतो, मुनीशो मुनि-पालकः॥८०॥
मुनि - राज-प्रियो मोहो, मेधो मेधा-दया-परः। मेधाकारो महा-बुद्धिः, मेधाचार्यो महानघः॥८१॥
मेधावी मीन - मथनो, मेधावी - नाम-हृद्यशः। मेधावी-दान-सन्तुष्टो, मेधा-दान-परायणः॥८२॥
मेध्यो मदो महोत्साहो, मेधाऽऽराधन-तत्परः। मोक्ष-मार्गो मोक्ष-परो, मोक्ष-मार्ग-प्रकाशकः॥८३॥
मोक्ष - मार्ग - रतो मोक्षो, मुमुक्षोर्मोक्ष-दायकः। मोक्षाचारो मोक्ष-करो, मुमुक्षुर्मोक्षमा-पतिः॥८४॥
मुक्ताहार - धरो मुक्तो, मुक्तेशो मुक्त-नायकः। मुक्त-राजो मुक्त-पालो, मुक्त-मार्ग-विचक्षणः॥८५॥
मुक्ताचार - परो मुक्तो, मुक्तानां मुक्ति-दायकः। मनो-वेगो मनो-रूपो, मन्वन्तरमतन्द्रितः॥८६॥
मन्वन्तर - कुल - जातो, मनोगतिर्विखण्डनः। मरसा-प्रेरको मायो, मायाचार-व्यतिक्रमः॥८७॥
मनो - हरो मनो-नज्ञो, मनो - वृत्ति - प्रकाशनः। मनो-वृतिर्भूमिकरो, मनो-वृत्तिर्निवारकः॥८८॥
मनो - वृत्तिर्धरो मूल्यो, मकर-ध्वजः महा-ध्वजः। महाध्वरो महा-देवो, महाज्ञान्तो मनोत्तमः॥८९॥
मार्गचार-रतो मार्गो, मार्ग-गामी महत्-सुखः। मार्ग-गामि सुख-प्रदो, मार्गिणां भय-भञ्जनः॥९०॥
मन्त्र-विद्या-परो मन्त्रो, मन्त्राचारो महा-मतिः। मन्त्र-राजो मन्त्र-नादो, मन्त्रो मन्त्रात्मको मतः॥९१॥
मन्त्र-शास्त्र-प्रदो मन्त्री, मन्त्रिणां मन्त्र-दायकः। मन्त्र-जाप-निवासी च, मन्त्र-जाप्यो महत्-प्रियः॥९२॥
मन्त्र-बीजो मन्त्र-परो, मन्त्र-वश्यो म-कल्मषः। मन्त्राराधन-सन्तुष्टो, मन्त्र-पूजन-तत्परः॥९३॥
मन्त्रेष्टी मन्त्र-वादी च, मन्त्र-कारो महा-नृपः। महा-यज्ञो महा-दक्षो, महा-चिन्तामणि-प्रभः॥९४॥
महा-पुराण-पुरुषो, महा-विश्वम्भरो मतः। महा-वीरः महाऽऽदित्यो, महा-सिंहो महत्-करः॥९५॥
महा-कपीन्द्रो मकरो, महा-कालो महा-बली। मण्डपो मण्डपाकारो, मण्डली-काम-हर्हरः॥९६॥
महा-मण्डप-मध्यस्थो, महा-मण्डप-कारकः। मुक्ति-कैवल्य-दाता च, मुक्ति-सायुज्य-दायकः॥९७॥
मुक्ति-सालोक्य-दायी च, मुक्ति-सारूप-रूढधीः। मुक्ति-समीप्यो मा-कान्तो, महाशेषाचलोपमः॥९८॥
मुक्तानां मुक्ति - दाता च, मुमुक्षुणामुपासितः। मुक्तेश्वरो मन्द-मथनो, मुग्ध-गोपाङ्गनावृतः॥९९॥
मुग्ध - गोप्यो मुग्ध-रतो, मुग्ध-गोप-समावृतः। मुग्ध-गोप-विहारी च, मुग्ध-गोपाल-पालकः॥१००॥
महा-सिंहो महा-भ्रान्तो, महाचण्डो महा-लयः। महद्वरो मतान्तस्थो, मत्तानां मद-खण्डनः॥१०१॥
मद-मत्तो मद - रतो, मद-मार-विनाशनः। मानापमानयोर्मानी, मुनि-शाप-विखण्डनः॥१०२॥
मुनि-वर्यो मुनि-परो, मुनि-त्राता मुनि-प्रियः। मुनेरानन्द-दाता च, मुनि-सन्तोष-कारकः॥१०३॥
मुनि-यज्ञ-निवासी च, मुनि-यज्ञ-सुरक्षितः। मुनि-प्रियो मुनि-तपो, मुनि-प्राणो मुनेर्नृपः॥१०४॥

मुनि-पूजन-सन्तुष्टो, मुनि-पूज्यः मुनीश्वरः। मुग्ध-कान्ता-प्रियो मित्रो, मुग्ध-नायक-नायकः॥१०५॥
मुग्धाचार-परो मार्गो, महा-मार्गो महत्-फलः। महा-योगो महा-सेव्यो, महा-भद्रो महा-शिवः॥१०६॥
मोद-दाता मोद-त्राता, मातृणां मोद-दायकः। मोद-मातङ्ग-दाता च, मत्त-मातङ्ग-गामिकः॥१०७॥
मोद-मार्ग-प्रदाता च, मोद-मार्ग-प्रवर्तकः। मानुषो मनुजाकारो, मान-लीला-विहार-कृत्॥१०८॥
मुण्ड-माला-धरो मुण्डो, मुण्ड-चण्ड-विखण्डनः। मधु-वातो मधु-रतो, माधवो मधुराधरः॥१०९॥
मेघ - सेवा - परो माघो, मघवा भय-नाशनः। मनीषो मन-ईषश्च, मन-ईषा मनीषिका॥११०॥
मरुद् - योगो मरुद्गामी, मरुतोजा महाक्षरः। महा-शल्यो मरुत्-पुत्रो, महा-रुद्रो मही-धरः॥१११॥
महा - रुग्रो महा - रुद्रो, महद्विष्णुर्महर्निशं। महद्बीजं महद्दण्डं, महत्-शङ्खं महद्धनुः॥११२॥
महत्पत्रं महच्छत्रं, महा-वानरि - नाशनः। महा-गोलोक-वासी च, महा-वैकुण्ठ-नायकः॥११३॥
महा-कालो मही-पालो, महाम्भोधिर्महा-व्ययः। महा-चिन्त्यो महा-व्यक्तो, महा-रामो महासुरः॥११४॥
मत्स्य - रूप - धरो मत्स्यो, मनाके मैथुन-प्रियः। महा-वराटो मोङ्कारो, महत्परशु-धारकः॥११५॥
महा-परशु-धारी च, महच्छक्ति-निवारकः। मँ-मँ-मँ-बीजो मतुलो, माँ-माँ-माँ मुनि-बान्धवः॥११६॥
मकार - सर्व - साध्यानां, मकारो मरुतात्मजः। मकार-सर्व-देवानां, मकार-सर्व-सिद्धिदः॥११७॥
मकार - सर्व - जीवनां, मकार-सर्व-पालकः। मकार-सर्व-सिद्धानां, मकारं सर्व-कारणम्॥११८॥
मकारो लोक-लोकानां, मकारः सर्व-व्यापकः। मकारः सर्व-शास्त्राणां, मकारः सर्व-मायिकः॥११९॥
मति - मानो मान-मत्तो, मत्त-दैत्य-विनाशकः। मति-मान-प्रियो मर्को, मुनि-धर्म-परायणः॥१२०॥
मति - वाद - मतां नाथो, मत-मानुषमाधरः। मायातीतो महानद्यो, महा-बल-पराक्रमः॥२२१॥
महा-वसु-प्रदाता च, महाक्षो मनुजेश्वरः। मतिमान् मानवो मायी, माधवो मिथुनो मिथः॥२२२॥
मित-वादी मत्त-केशो, महा-भू-भार-हारकः। महा-दैत्य-विनाशी च, महा-दैत्य-विनाशनः॥१२३॥
महा - योद्धा - यतिश्चैव, महा-दशरथात्मजः। महा-मुनि-निवासी च, महा-मुनि-सुख-प्रदः॥१२४॥
मुनि-शाप-हरो मर्को, मन्दारो, मन्द-बान्धवाः। मन्दार-वन-सञ्चारी, मन्दार-वन-पालकः॥१२५॥
मयूर-निस्वनो मर्को, मयूराकृति-कुण्डलः। मुक्त-कुण्डोऽथ मुक्ताढ्यो, मुक्तो मोहान्ध-भञ्जकः॥१२६॥
मृत्युञ्जयो महा-मृत्युर्महा-भय-विखण्डनः। माँ-माँ-माँ बीज-रूपः श्रीं-श्रीं-श्रीं-श्रीं-श्रीं मृग-मर्दनः॥१२७॥
मुख्याम्भोज-वरो मध्यो, मधुरान्तो मरुत्-सखः। महा-शुक्रो महा-चित्रो, महा-चित्र- रथो-रूपः॥१२८॥
महा - बन्धो महा - सिन्धुर्महा-पक्षो महत्-खगः। महा-गरुड़मासीनो, महा-गोविन्दमापरः॥१२९॥
महा - वृन्दावन - रतो, महा-गोकुल-नायकः। महा-रास-रतो मां मां, मन्द-गायन-गायकः॥१३०॥
महा - गोवर्द्धन - धरो, महा-गोलोक-दायकः। महाक्षि-तनया-प्राणः, महाक्षि-तनया-प्रियः॥१३१॥
महाक्षि - शेत - कुशलो, महा-सेतु-प्रपालकः। महाक्षि-बन्धन-करो, महाक्षि-मथने-रतः॥१३२॥

महा-पातक-हारी च, महा-पातक-नाशनः। महा-कोदण्ड-धारी च, महा-कोदण्ड-भञ्जनः॥१३३॥
श्रीं क्लीं भ्रीं भ्रीं महा-बीजो, महा-वीज-मयो मखः॥१३४॥
महा - बालि - प्रमथनो, महा-कंस-निकृन्तनः। महा-यज्ञो महानज्ञो, महा-दीक्षो महा-मयः॥१३५॥
मृगेन्द्रे च वर-धरो, मृग-चर्मोऽवरोधकः। मूँ-मूँ-मूँ च त्रिभिर्बीजो, महा-कूर्चो महद्-बलः॥१३६॥
मौं-मौं-मौं मोद-प्रदाता च, माया-बीज-जयो-जपः। महा-स्वाहा-स्वधा मँ-मँ, माँ-माँ-माँ च महीरुहः॥१३७॥
महा - विशिष्टो माहेन्द्रो, मुनि-नाथो मुनि-प्रियः। मुनीनां मानसो भृङ्गी, मुनीनां भय-भञ्जनः॥१३८॥
महा - वैभव - हारी च, महा-वैभव-कारकः। महा-वैभव-वासी च, महा-वैभव-वैभवः॥१३९॥
मकाराक्षर-धारी च, मकारो मीन-केतनः। महा-महः मय-मयं, ईँ-ईँ-ईँ भ्रीं क्लीं-क्लीं मय फट्-करः।
महा-रथो महा-रामो, महा-भक्तस्य बान्धवः॥१४०॥

॥फल-श्रुतिः॥

इतीदं नाम - साहस्रं, श्रीरामस्य दयानिधे! पठनात् पाप-राशीनां, खण्डनं भय-भञ्जनम्।
ये नरा धर्म-लोकेषु, राम-भक्ति-पराङ्मुखाः॥१॥
जपस्तपो-दया-शौचं, शास्त्राणामवगाहनम्। सर्वं वृथा विना येन, शृणु त्वं पार्वति! प्रिये!॥२॥
महा - निशायां सततमेकाकी मानसं कुरु। पठते नाम-साहस्रं, जीवन्मुक्तो न संशयः॥३॥
वृन्दावने वट - तटे, केतकी - मालती - वने। चतुष्पथे मध्य-देशे, ग्रहणे च शिवालये॥४॥
यो नरः पठते भक्त्या, स मुक्तो भुवि भारते। कदली-वने चूत-वने, तडागे सरिता-तटे॥५॥
शतावर्त्तं पठेद् देवि!, मकारादि - सहस्रकम्। श्री - अचल - भक्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनी॥६॥
राजानो राज - पुत्राश्च, राजकीयाश्च मन्त्रिणः। त्रिकाल-पठनादस्य, दृश्यन्ते च त्रिपक्षतः॥७॥
अश्वत्थ-मूले पठतो, नास्ति वैरि-कृतं भयम्। त्रिकाल-पठनादस्य, सिद्धिः स्यात् कर-संस्थिता॥८॥
ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय, स्नानं कृत्वा रघूत्तमे! नित्यं पठति देवेशि! दिव्यं नाम - सहस्रकम्॥९॥
श्रीराम-भक्तिमाप्नोति, नृणां सुखमवाप्नुयात्। यत्पूर्वं च कृतं पापं, यत्पापं मानसं भवम्॥१०॥
तत्सर्वं शृण्वतो भक्त्या, नश्यन्ते च महद्भयम्। एकाग्र-मानसो भूत्वा, ध्यानं कृत्वा रघुद्वरे॥११॥
वाम-पार्श्व-गतां सीतां, देवी काञ्चन-सन्निभाम्। वराभयां च वरदां, रत्न-सिंहासने स्थिताम्॥१२॥
पृष्ठे सौमित्रि - बन्धूनां, छत्र-चामर-शोभिताम्। अग्रे हनुमतं वीरं, विनीतं च कृताञ्जलिं॥१३॥
एवं ध्यात्वा पठेद्देवं, दिव्य - नाम - सहस्रकम्। अहं-ब्रह्ममाप्नोति, योगीन्द्राणां सुदुर्लभम्॥१४॥
धनार्त्ती धनमाप्नोति, विद्यार्थी विद्यया वरः। पुत्रार्थी पुत्रमाप्नोति, चिर-कालं स जीवति॥१५॥
राम - नाम - परो मन्त्रस्तारको मूल-कारकः। लक्ष-द्वयं जपेद्देवं, पश्चात् नाम-सहस्रकम्॥१६॥
सहस्र - नाम-प्रपठेन्मकारादि-मनोहरम्। गृहे तस्य स्थिरा लक्ष्मीः, स्थिरीभूत्वा सुनिश्चला॥१७॥

रकारादि न सिद्धेत, मकारादि बिना शिवे! मकारादि न सिद्धेत, रकारादि बिना प्रिये!॥१८॥
चित्रकूटे राम - वने, ये पठन्ति च साधवः। श्रीराम-किङ्करा भूत्वा, वैष्णवा दृढ़-मानसा॥१९॥
गोपनीयं गोपनीयं, गोपनीयं प्रयत्नतः। स्तोत्र - राजस्य पाठेन, नरो नारायणः स्वयं॥२०॥
त्रिभिर्वर्षै रामचन्द्रं, स्वप्ने पश्यति मानवः। शठाय कृपणायाथ, दाम्भिकाय सुरेश्वरि!॥२१॥
न दातव्यं न दातव्यं, न दातव्यं कदाचन। अभक्तायात्म-पुत्राय, दातव्यं ब्रह्महा भवेत्॥२२॥
आत्म - शिष्याय भक्ताय, राम-भक्ति-पराय च। दातव्यं सुखमाप्नोति, सर्वथा सर्वदा प्रिये॥२३॥
एकावृत्तिं पठेद्देवि, धन - धान्य-समृद्धिवान्। द्वि-वारं पठते नित्यं, पुत्र-पौत्रादि-वर्द्धनम्॥२४॥
तव स्नेहात् प्रवक्ष्यामि, म - काराक्षरमुत्तमम्। पर-निन्दा-परो नित्यं, पर-स्त्री-गमनं तथा॥२५॥
सुरापी च दुराचारो, क्षयतां गुरुहा भवेत्। यत्र गृहे सहस्रं च, नाम्ना तिष्ठति पार्वति!॥२६॥
तत्र स्थाने भयं नास्ति, भूत-वेतालकादिजम्। डाकिन्यादि-भयं नास्ति, रामचन्द्र-प्रसादतः॥२७॥
महा - निशायां सततं, त्रि-पाठ-नियमेन यः। काल-ज्ञानं भवेत्तस्य, स योगी नात्र संशयः॥२८॥

॥ॐ तत्सत् श्रीरुद्र-यामले महा-तन्त्रे पार्वती-हर-सम्वादे
'म'कारादि-श्रीराम-सहस्र-नाम-स्तोत्रम् ॐ तत्सत्॥

* * *

'रां रामाय नमः' —षडक्षर मन्त्र की महिमा

भरद्वाज जी ने **महर्षि याज्ञवल्क्य** से प्रार्थना की कि— 'भगवान् ! श्रीराम-मन्त्र-राज (**रां रामाय नमः**) के माहात्म्य का वर्णन कीजिए'।

प्रसिद्ध महात्मा **याज्ञवल्क्य** ने कहा—'स्वयं-प्रकाश, परम ज्योतिर्मय तथा केवल अपने अनुभव द्वारा गम्य अद्वितीय चिन्मात्र-स्वरूप जो परमात्मा है, वही षडक्षर मन्त्र (**रां रामाय नमः**) का प्रथम अक्षर (**रां-बीज**) माना गया है।

मन्त्र का मध्य-भाग (**रामाय**), अखण्डैक -रसानन्द-स्वरूप **तारक-ब्रह्म** का वाचक है। उसे **सच्चिदानन्द-स्वरूप** ही समझना चाहिए।

मन्त्र के अन्तिम भाग (**नमः**) को भी **पूर्णानन्दैक-विग्रह परमात्म-स्वरूप** ही जानना चाहिए। सम्पूर्ण देवता और मुमुक्षु पुरुष सदा अपने हृदय में उसको नमन करते रहते हैं।

जो उक्त **षडक्षर मन्त्र-राज (रां रामाय नमः)** का प्रति-दिन नियम-पूर्वक **'जप'** करता है, वह अग्नि में तप कर शुद्ध किया हुआ हो जाता है। वह पापों से छूट कर महान् हो जाता है और अमृतत्व को प्राप्त होता है। —अथर्व-वेदीय श्रीरामोत्तर-तापनीयोपनिषत्॥

धार्मिक जगत् की हल-चल :—

१. भगवान् श्री परशुराम-जयन्ती

श्रीपीताम्बरा-पीठ, दतिया (मध्य प्रदेश) में भगवान् श्रीपरशुराम-जयन्ती के अवसर पर उज्जैन से पधारे देश के मूर्धन्य साहित्यकार **डॉ० राममूर्ति त्रिपाठी** ने कहा—".....अवतारी पुरुष—'**लोक-कल्याण**' हेतु अवतीर्ण होते हैं। '**क्षमा**'—ब्राह्मण और ऋषियों का सबसे बड़ा धर्म है। '**क्षमा**' के भी कतिपय धर्म हैं, जो इनकी रक्षा करेगा, उनकी रक्षा '**धर्म**' स्वयं करेगा।....."

'**जयन्ती**'—कार्य-क्रम की अध्यक्षता हरिद्वार से पधारे स्वामी भागवतानन्द जी सरस्वती ने की। आपने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा—'**भगवान् के लिए सब प्यारे हैं। जिस प्रकार माँ अपने शिशु के गन्दे वस्त्रों को बदल देती है, उसी प्रकार परमात्मा परिवर्तन करते हैं। दुष्टों की कोई जाति नहीं होती। परमात्मा सबमें एक है। भगवान् परशुराम के चरित से शस्त्र और शास्त्र दोनों की उपयोगिता सिद्ध होती है।**'

कार्य-क्रम में गोरखपुर से पधारे वैद्य आत्माराम दुबे ने भी अपने विचार व्यक्त किए। श्रीपीताम्बरा-पीठ के मन्त्री श्रीसूर्यदेव **शर्मा** तथा न्यासी-गण **सर्व-श्री ठाकुर केशव सिंह, जगदीश गुप्त** एवं हरीराम **साँवला** तथा बड़ी संख्या में भक्त-गण उपस्थित थे।

---

२. माँ श्रीपीताम्बरा-जयन्ती

दतिया के सिद्ध-पीठ—'**श्रीपीताम्बरा-पीठ**' में भगवती पीताम्बरा की जयन्ती धूम-धाम से मनाई गई। प्रात:काल माँ का अभिषेक व पूजन हुआ। सायं-काल गोष्ठी-सभा आयोजित हुई। '**हिन्दी-सभा**' की अध्यक्षता करते हुए **श्रीभागवतानन्द सरस्वती जी महाराज** ने कहा कि—'**जड़ वस्तुएँ आपस में मिल नहीं सकतीं क्योंकि उनमें इच्छा-शक्ति नहीं होती। इच्छा-शक्ति चित्-शक्ति में होती है। महा-माया व पीताम्बरा चित्-शक्ति को कहते हैं। चित्-शक्ति ही परा-शक्ति है। इसके द्वारा ही संसार के सभी कार्य होते हैं।....**'

डॉ० राममूर्ति त्रिपाठी, उज्जैन ने कहा कि—'आगमों में शक्ति की पर्याप्त चर्चा है। महा-शक्ति ही सृष्टि में महा-**विद्या के रूप में दश-महा-विद्याओं में विभक्त हुई है।** कार्य-भेद से इनकी अलग-अलग विशेषताएँ हैं। सभी शक्तियाँ मूलत: युक्ति-युक्त- प्रदाय हैं। सबका अलग-अलग महत्त्व है। भ० बगला— माँ पीताम्बरा स्तम्भन-कारिणी हैं। ब्रह्म-लीन '**राष्ट्र-गुरु**' **स्वामी जी** ने आपका '**राष्ट्र-रक्षा**' हेतु आह्वान किया था, जिससे राष्ट्र का सङ्कट दूर हुआ था।.....'

डॉ० आत्माराम दुबे, गोरखपुर ने कहा कि—'माँ पीताम्बरा की उपासना प्राय: लोग तब करते हैं, जब सङ्कट आता है। आज लौकिक भाव यही है। सामान्य समय में भी मानसिक रूप से आपका ध्यान-चिन्तन लाभ-कारी है।.....'

उक्त '**हिन्दी-सभा**' के उपरान्त '**सङ्गीत-सभा**' का रस-मय आयोजन भी हुआ, जिसमें 'आकाश-वाणी' और 'दूर-दर्शन' के कलाकारों ने भव्य प्रस्तुति की। 'आकाश-वाणी' गोरखपुर, के सुप्रसिद्ध कलाकार प्रो० डॉ० पण्डित शरदमणि त्रिपाठी ने '**राग वागेश्वरी**' में माँ का ध्यान व '**गुरु-वन्दना**' प्रस्तुत किया। श्रीमती मिथिलेश तिवारी ने '**भजन**' प्रस्तुत किया। प्रयाग से पधारी **डॉ० कावेरी मिश्रा** ने गायन प्रस्तुत किया। काशी के पण्डित दामोदर दीक्षित द्वारा शास्त्रीय सङ्गीत प्रस्तुत हुआ। '**पीठ**' की ओर से **श्री रेवाराम त्रिपाठी** एवं **हरीराम साँवला** ने सभी कलाकारों का स्वागत किया।

★ ★ ★

'नाम'-मन्त्र-साधना

❖ वेदाचार्य पण्डित लक्ष्मणदत्त जी शास्त्री

शास्त्रों में वर्णित श्रीभगवती या श्रीभगवान् के **'नाम'** ऐहिक एवं पारलौकिक— दोनों सुखों को प्राप्त करने के मुख्य उपाय हैं। **'नामों'** का आश्रय लेकर एक ओर जीव सांसारिक प्रत्यूहों-व्यूहों को काटता है, तो दूसरी ओर मोक्ष भी प्राप्त करता है। इसीलिए शास्त्रों में कहीं **'हरि-नाम'** को कर्म-सद्गुण्य-कारण अपूर्णता को दूर करनेवाला कहा है, तो कहीं **'पाप-हर्त्ता'** कहा है। यथा —

यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या, तपो-यज्ञ-क्रियादिषु। न्यूनं सम्पूर्णतां याति, सद्यो वन्दे तमच्युतम्।।

अर्थात् जिन भगवान् के नाम लेने से तप-यज्ञ-क्रियाओं में जो-जो त्रुटियाँ रहती हैं; वे सभी पूर्ण हो जाती हैं, ऐसे अच्युत भगवान् को प्रणाम है।

एतेनैव ह्यघोनोऽस्य, कृतं स्यादघनिष्कृतम्। यदा नारायणायेति, जगाद चतुरक्षरम्।।

अर्थात् पापी अजामिल ने जिस समय 'नारायण' ये चार अक्षर कहे, उसके पाप तत्क्षण दूर हो गए।

इस प्रकार स्पष्ट है कि भगवान् के **'नाम'** के स्मरण से एक ओर सभी कर्मों— **जप-पूजा-हवन-यज्ञ के अङ्गों की अपूर्णता पूर्ण** होती है, तो दूसरी ओर **पाप-निवारण** भी होता है। **स्मृतियों** में तो यहाँ तक कहा है कि—'अज्ञान-वश लिया हुआ भगवन्नाम भी सब पातकों से मनुष्य को छुड़ा देता है।' यथा—

अवशेनापि यन्नाम्नि, कीर्त्तिते सर्व-पातकैः। पुमान् विमुच्यते सद्यः, सिंह-त्रस्तैर्मृगैरिव।।

वेदों में भी **भगवान् के नामों की महिमा** वर्णित है। देखिए, **ऋग्वेदीय विष्णु-सूक्त** में **भगवन्नाम का महत्त्व** दिखाया है—

मर्त्ता अमर्त्यम्यते भूरि नाम मनामहे। विप्रासो जातवेदसः।। आस्व जानन्तो नामचिद्विविक्तन।।

अर्थात् मरण-धर्म को प्राप्त हम वेद-ब्राह्मण तेरे अविनाशी नाम को यज्ञ-तप आदि से अधिक मानते हैं। महानुभाव विष्णु के सर्व-नमनीय सर्वात्म्य-प्रतिपादक एवं पुरुषार्थ-प्रद नाम का सर्व प्रकार से कीर्त्तन करो।

वेदों में अनेक स्थलों में **'नाम'-प्रतिपादक मन्त्र** आए हैं—**'प्रतत्ते अद्य शिपिविष्ट नामार्यः शंसामि विद्वान्।'** अर्थात् हे विष्णो श्रेष्ठ! मैं आपके नाम की बड़ाई करता हूँ।

भगवन्नाम— पाप-निवारक, मोक्ष-दायक के साथ-साथ **'धर्म-अर्थ-काम'**-रूपी तीन अन्य पुरुषार्थों को भी देता है। कहा गया है कि—

न गङ्गा न गया काशी, न सेतुर्न च पुष्करम्। जिह्वाग्रे वर्त्तते यस्य, हरिरित्यक्षर-द्वयम्।।
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः, सामवेदो ह्यथर्वणः। अधीतास्तेन येनोक्तं, हरिरित्यक्षर - द्वयम्।।
प्राण - प्रयाण - पाथेयं, संसार - व्याधि - भेषजम्। दुःख-क्लेश-परित्राणं, हरिरित्यक्षर-द्वयम्।।

अर्थात् गङ्गा, गया, काशी, पुष्कर, सेतु-बन्ध, रामेश्वर आदि कहीं जाने की आवश्यकता नहीं है। जो **'हरि'**-इन दो अक्षरों का उच्चारण करता है, उसे सब **तीर्थों का फल** प्राप्त होता है। ऋग्वेद, यजुर्वेद, साम, अथर्व— **चारों वेद** उसने पढ़ लिए, जिसने **'हरि'**— ये दो अक्षर कहे। दक्षिणा-सहित अश्वमेधादि यज्ञ भी उसने कर लिए, जिसने कि **'हरि'** ये दो अक्षर अपने मुख से कहे। **'हरि'**— ये दो अक्षर प्राण निकलते समय **पाथेय** एवं **संसार-रूप व्याधि की औषधि** तथा **दुःख-क्लेश से रक्षा करनेवाले** हैं।

उक्त प्रमाणों द्वारा **भगवन्नाम का त्रि-वर्ग-फलत्व** स्पष्टतया सिद्ध होता है। एक शङ्का होती है कि केवल मात्र **हरि-नारायण** इन नाम-विशेषों में ही यह प्रभाव है, या फिर अन्य सभी **भगवन्नामों** में। वास्तव में अपने मन में ऐसी शङ्का कभी नहीं लानी चाहिए क्योंकि **'नामान्यनन्तस्य हत-त्रपः पठन्', 'वैकुण्ठ-नाम-ग्रहणं हरेर्नाम-पदैः'** इत्यादि प्रमाणों से यह स्पष्ट ज्ञात है कि भगवान् के साधारण नाम भी फल-दाता हैं।

अच्युतं केशवं विष्णुं, हरिं सत्यं जनार्दनम्। हंसं नारायणं चैव, एतन्नामाष्टकं शुभम्।

अर्थात् १ अच्युत, २ केशव, ३ विष्णु, ४ हरि, ५ सत्य, ६ जनार्दन, ७ हंस, ८ नारायण— इत्यादि सभी नामों में फल-दातृत्व-शक्ति है।

यत्र तत्रानुकुर्वन्ति, विष्णोर्नामानु-कीर्तनम्। सर्व-पाप-विनिर्मुक्तास्तेऽपि यान्ति सनातनम्।।

'भविष्य-पुराण' के उक्त वचनानुसार **'नाम-कीर्त्तन'** द्वारा प्राणी-मात्र **भगवद्-धाम** प्राप्त कर सकता है। **'नाम-सङ्कीर्तन'** में **देश-काल, शौच-अशौच** का भी नियम नहीं है। देखिए, **'वैश्वानर संहिता'** कहती है—

न देश - काल - नियमः, शौचाशौच - विनिर्णयः। परं सङ्कीर्त्तनादेव, राम-रामेति मुच्यते।।

यज्ञ, दान, स्नान एवं **जप** करने में देश-काल की व्यवस्था देखी जाती है। **'विष्णु-सङ्कीर्त्तन'** में कोई नियम नहीं है। खाते-पीते, उठते-बैठते, सोते हुए भी **'कृष्ण-कृष्ण'** कहते मानव-मात्र सब पापों से छुटकारा पा जाते हैं। देखिए, **'नारदीय प्रमाण'**—

न देश - नियमो राजन्, न काल-नियमस्तथा। विद्यते नात्र सन्देहो, विष्णोर्नामानुकीर्त्तने।।
कालोऽस्ति यज्ञे दाने वा, स्नाने कालोऽस्ति सज्जपे। विष्णु-सङ्कीर्त्तने कालो, नास्त्यत्र पृथिवी-पते!।।
गच्छन् तिष्ठन् स्वपन् वापि, पिबन् भुञ्जन् जपंस्तथा। कृ ष्ण-कृष्णेति सङ्कीर्त्य, मुच्यते पाप-कञ्चुकात्।।

शास्त्रों के अनुसार **भगवान्-नाम के कीर्त्तन का फल** तो सर्व-श्रेष्ठ है ही, **'भगवन्नाम-श्रवण'** एवं **'स्मरण'** का फल भी ऐसा ही है। **'भागवत'** के दशम स्कन्ध में इस सम्बन्ध में स्पष्ट रूप से लिखा है कि **"भगवन्नाम की भावना एवं कीर्त्तन द्वारा विद्याधर-पद को पाकर स्वर्ग की रामाओं के साथ आनन्द पाता है।"**

'विष्णु-धर्मोत्तर' में लिखा है— **'आश्चर्य, भय, शोक, छींक के आने पर अथवा किसी भी बहाने से भी जो मेरे नाम को लेता है, वह परम गति को प्राप्त हो जाता है।'**

'शिव-गीता' कहती है— **'चलते-फिरते जो मनुष्य भगवन्नाम का स्मरण करता है, उसके सम्पूर्ण पाप नष्ट हो जाते हैं।'**

'पद्म-पुराण' कहता है— **'कलियुग में जो हरि-स्मरण करते-कराते हैं, वे निश्चय ही मनुष्यों में भाग्यशाली एवं कृतार्थ होते हैं।'**

कलियुग में शास्त्रीय देश-काल पात्र-श्रद्धादि धर्मादि के सर्वाङ्ग असम्भव होने से **भगवन्नाम-कीर्त्तन-चिन्तन-स्मरण का महत्त्व** बढ़ जाता है। इस सम्बन्ध में पार्वती जी से स्वयं शिव जी कहते हैं— **'यद्यपि सब संसार का मैं स्वामी हूँ, तथापि विष्णु भगवान् के नाम का जापक हूँ। यह मैं सत्य कहता हूँ कि भगवन्नाम द्वारा ही मनुष्यों की सद्-गति हो सकती है, अन्य प्रकार से नहीं।'**

श्रीमद्-भागवत के द्वादश स्कन्ध में कहा गया है कि— **'सतयुग में विष्णु भगवान् के ध्यान से, त्रेता में यज्ञ से, द्वापर में पूजा-सेवा से जो फल-प्राप्ति होती है, वह 'कलि-युग' में भगवत्कीर्त्तन से ही हो जाती है। यद्यपि 'कलि-युग' दोषों का खजाना है, तथापि एक विशिष्ट गुण इसमें ऐसा है कि भगवत्कीर्त्तन से ही परम धाम मिल जाता है—**

कृते यद् ध्यायतो विष्णुं, त्रेतायां यजतो मखैः। द्वापरे परिचर्यायां, कलौ तद्धरि-कीर्त्तनात्॥

कलेर्दोष-निधे राजन्, अस्ति ह्येको महान् गुणः। कीर्त्तनादेव कृष्णस्य, मुक्त-बन्धः परं व्रजेत्॥

श्रीभगवन्नाम **'अग्नि'** के समान वर्तमान पापों का ही नाशक है या फिर आगामी पापों का भी नाशक है, इस सम्बन्ध में 'लघु-भागवतामृत' में स्पष्ट कहा गया है कि गोविन्दानल-कीर्त्तन द्वारा **त्रिविध-कालिक पाप** भस्म हो जाते हैं—

वर्त्तमानं च यत् पापं, यद् भूतं यद् भविष्यति। तत्सर्वं निर्दहत्याशु, गोविन्दानल-कीर्त्तनात्॥

'श्रीमद्-भागवत', षष्ठ स्कन्ध में यमराज जी अपने दूतों से कहते हैं— **'जिनकी जिह्वा भगवद्-गुण-गान नहीं करती, जिनका चित्त भगवच्चरणारविन्द का स्मरण नहीं करता, जिनका शिर एक बार भी श्रीकृष्ण-प्रणाम में झुका नहीं एवं विष्णु भगवान् के व्रतोपवासादि नहीं किए, ऐसे पापियों को मेरे लोक में लाया करो।'**

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि शास्त्रों में यद्यपि यह कहा गया है कि एक काल में **'नाम'-कीर्त्तन** द्वारा सर्व-पाप-निवृत्ति हो जाती है, तथापि फिर पापान्तरोत्पत्ति न हो जाए, अतः इस भय से उसके **विधान, आवृत्ति** आदि के बारे में भी कहा गया है। यह बात **महर्षि याज्ञवल्क्य** की निम्न उक्ति से भलीभाँति स्पष्ट होती है—

न तावत् पापमस्तीह, यन्नाम्ना न हतं हरेः। अतिरेक-मयादाहुः, प्रायश्चित्तान्तरं बुधः॥

वास्तव में भक्ति की दृढ़ता के कारण ही बारम्बार **भगवन्नाम** लेने का विधान है। **'नाम'** का प्रभाव यद्यपि बहुत अधिक है, फिर भी **समूल पाप-निवृत्ति के लिए 'नामों' की आवृत्ति का विधान** है। **'नाम'** का प्रभाव तो इतना अधिक है कि भक्त श्रीराम भगवान् से प्रार्थना

कर कहता है कि— **'हे प्रभो! आपसे बढ़कर आपका नाम है। आपने तो केवल मात्र अयोध्या को ही तारा, आपके नाम ने तो तीनों लोकों को तार दिया।'**

इस प्रकार 'नाम' की महिमा अति विस्तृत ही है। लिखा है—

न नाम-सदृशं ज्ञानं, न नाम-सदृशं व्रतम्। न नाम-सदृशं ध्यानं, न नाम-सदृशं फलम्।।
न नाम-सदृशस्त्यागो, न नाम-सदृशः श्रमः। न नाम-सदृशं पुण्यं, न नाम-सदृशी गतिः।।
नामैव परमा मुक्तिर्नामैव परमा गतिः। नामैव परमा शान्तिर्नामैव परमा स्थितिः।।
नामैव परमा भक्तिर्नामैव परमा गतिः। नामैव परमा प्रीतिर्नामैव परमा स्मृतिः।।
नामैव कारणं जन्तोर्नामैव प्रभुरेव च। नामैव परमाराध्यः, नामैव परमो गुरुः।।

जब **भगवन्नाम** की ऐसी महिमा है, तब **श्रीराजराजेश्वरी, दश-महा-विद्याओं के पावन नामों** की क्या बात है! ये सब तो भगवती के चरणारविन्द का आश्रय लेनेवाले हैं—

'ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च, ईश्वरश्च सदा-शिवः। एते पञ्च-महा-प्रेताः, पाद-मूले व्यवस्थिताः।

इसीलिए **'ब्रह्माण्ड-पुराणोक्त ललितोपाख्यान'** के **'श्रीललिता-सहस्र-नाम'** की फल-श्रुति में कहा है कि—

कलौ पापैक-बहुले, धर्मानुष्ठान - वर्जिते। नामानुकीर्त्तनं मुक्त्वा, नृणां नान्यत्-परायणम्।।

अर्थात् कलियुग में पाप के प्रचुर होने से धर्मानुष्ठान से जनता वर्जित रहती है। इस काल में मनुष्यों का उद्धार करनेवाला **'सहस्र-नाम'** का पाठ ही है।

देवी के 'नाम'-मन्त्रों के पाठ की विशेषता क्या है, इस सम्बन्ध में **'ब्रह्माण्ड-पुराण'** कहता है—

लौकिकाद् वचनान्मुख्यं, विष्णु-नामानुकीर्त्तनम्। विष्णु-नाम-सहस्राच्च, शिव-नामैकमुत्तमम्।।
शिव-नाम-सहस्राच्च, देव्या नामैकमुत्तमम्। देवी-नाम-सहस्राणि, कोटिशः सन्ति कुम्भज!।।
तेषु मुख्यं दश-विधं, नाम-साहस्रमुच्यते। रहस्य-नाम साहस्रमिदं शस्तं दशस्वपि।।

अर्थात **'विष्णु-नाम-कीर्त्तन'** श्रेष्ठ है। **'विष्णु-सहस्र-नाम'** से **'शिव-सहस्र-नाम'** श्रेष्ठ है। **'शिव-सहस्र-नाम'** से भी **'देवी-सहस्र-नाम'** उत्तम है। **'देवी-सहस्र-नाम'** भी कोटि-कोटि संख्या के हैं। उन सब सहस्र-नामों में मुख्य **दश-महा-विद्याओं के 'दश-सहस्र-नाम'** हैं, जिनका सङ्केत **'एते दश-स्तवा गङ्का, श्यालका बालरासभा।' 'नामैक-देशे नाम-ग्रहणं'** न्याय के अनुसार साधक-प्रवरों ने किया है। ये **'गङ्कादि'**-दश अक्षर **'दश सहस्र-नामों'** के आदि के अक्षर हैं। **'देवी-भागवत'** में जिस प्रकार आदि के अक्षरों द्वारा अठारह पुराणों के नामों का उल्लेख है— **'मद्वयं भद्वयं चैव, ब्र-त्रयं व चतुष्टयम्। अनापलिङ्गकूस्कञ्च, पुराणानि पृथक्।'** इसी प्रकार उक्त दश अक्षरों के द्वारा **देवी के दश प्रमुख सहस्र-नामों** का उल्लेख है— उक्त दश सहस्र-नामों में भी **'श्रीललिता-सहस्र-नाम'** सर्वोपरि है। ऐहिक एवं पारलौकिक कामना हेतु **श्रीललिता-सहस्र-नाम** का पाठ प्रति-दिन करना चाहिए।

* * *

साधक का संवाद

१. 'वाम-मार्ग' का समर्थन

'आओ **ककुआ, 'शिवपुरी'** घूम आएँ।

तीन दिन बारात के झमेले में फँसे रहने से तबीयत ऊब उठी थी। **गणेश** की बात सुनकर कहा — चलो, पर **शिवपुरी** है कितनी दूर?

'यहाँ से दो मील होगी। बहुत सुन्दर जगह है। चलिए, वहीं ठण्ढाई भी छने और सन्ध्या-वन्दन भी हो, पर एक बात है। चुपचाप ही चला जाए। नहीं तो और लोग भी साथ हो जाएँगे, तब वह आनन्द न रहेगा।

परन्तु चलते-चलते **वाजपेयी जी** को भी सुग-सुग लग गई, उनके साथ **ठाकुर** भी जान गए। इस प्रकार हम चार जन चुपचाप खिसक गए। अभी सूर्योदय नहीं हुआ था, उषा-काल का सुहावना समय था। **'गङ्गा'**-तट पर **दादा जी** से भेंट हो गई। उन्होंने देखते ही पूछा— यह मण्डली कहाँ जा रही है?

मैंने प्रणाम किया और कहा—**'शिवपुरी'** जा रहे हैं हम लोग। यदि मन लग गया, तो सन्ध्या तक लौटेंगे।

यह कहकर हम नाव पर बैठ गए। मल्लाह के लग्गी लगाते ही नाव धारा में पड़ गई। आध घण्टे के लगभग हमारी नाव **'शिवपुरी'** के घाट में जाकर लग गई।

मेरा अपना गाँव **गङ्गा** के तट पर ही नहीं, किन्तु उसके एक सुन्दर तट पर है। **गङ्गा** के किनारे के कुछ ऐसे स्थल हैं, जिनकी स्थिति बहुत ही सुन्दर तथा मनोरम है। मेरा गाँव भी एक ऐसे ही स्थल पर बसा है, परन्तु **'शिवपुरी'** के **गङ्गा-तट** को देखकर मैं चकित रह गया। कगार के नीचे ही **गङ्गा** बह रही थीं और कगार पर दूर तक एक सघन बाग फैला हुआ था, जिसके एक अञ्चल पर कगार के किनारे दो पक्के मन्दिर तथा साधारण कुटीर भी एक-दूसरे से अलग-अलग बने हुए थे।

नाव से उतरकर हमने अपने नित्य-कर्मों से छुट्टी पाई। फिर कगार के ऊपर जाकर **मन्दिरों में देव-दर्शन** आदि किया। उसके बाद कुटीर में पहुँचे, जहाँ उस समय दो **संन्यासी** ठहरे हुए थे।

संन्यासियों का अभिवादन करके हम सब लोग उनके पास बैठ गए। वाजपेयी जी से उनकी बातचीत होने लगी। उन्होंने हम लोगों का परिचय **स्वामी जी** को दिया। साथ ही यह भी निवेदन किया कि—महाराज, यदि आपकी आज्ञा हो, तो हम लोग ठण्ढाई-बूटी तैयार करें।

उन **संन्यासियों** में एक ने कहा— हाँ, हाँ, जरूर-जरूर! वहाँ कुएँ पर सिल आदि रखी है। ठण्ढाई-बूटी भी लीजिए। बनाइए-खाइए।

'नहीं महाराज, सामान हम सब लोगों के पास है— केवल सिल-लोढ़ा और एक घड़ा चाहिए।' यह कहकर **वाजपेयी जी** कुएँ पर चले गए। **ठाकुर** और **गणेश** को भी अपने साथ लेते गए। मैं वहीं बैठा रहा।

उन **संन्यासियों** में एक **महात्मा** अपने कुटीर के भीतर ही बैठे रहे। हम लोगों के आने आदि

की ओर उन्होंने ध्यान तक न दिया। बात-चीत केवल वही दोनों **महात्मा** करते रहे, जो बाहर बैठे थे। मैं उनसे बातें तो करता रहा, पर कुटीर के भीतर बैठे हुए **महात्मा** की ओर मेरी निगाह बरबस घूम जाती थी। मेरी मनो-वृत्ति को समझकर उन **स्वामियों** में से एक ने कहा— कुटीर के भीतर जो **महात्मा** बैठे हैं, क्या आप उनके दर्शन करना चाहते हैं? परन्तु वे तो अभी अपनी **ध्यान-धारणा** में हैं। दस बजे से पहले उनसे बातचीत नहीं हो सकेगी।

मैंने कहा— मुझे उतनी शीघ्रता नहीं है। मैं तो आज दिन भर यहीं रहना चाहता हूँ, यदि आपको कोई असुविधा न हो।

'नहीं, नहीं, आप खुशी से रहिए। यदि कहें तो भोजन आदि का भी प्रबन्ध कर दिया जाए।'

'यदि आप लोग भी मेरी रसोई का भोजन ग्रहण करने की कृपा करें, तो भोजन भी बना लेंगे।'

स्वामी जी ने प्रार्थना स्वीकार कर ली। फलतः मैं भी कुएँ पर चला गया। मैंने **वाजपेयी जी** से कहा — **वाजपेयी,** मैंने **स्वामियों** को भोजन करने का निमन्त्रण दे दिया है, अतएव भोजन बनाने की व्यवस्था होनी चाहिए।

ठण्ढाई-बूटी छानने के बाद भोजन बनाने की तैयारी होने लगी। **ठाकुर** सामान ले ही आया था। एक मन्दिर के बगल में भोजन बनाने की जगह थी। दाल-भात, रोटी-तरकारी सभी कुछ बना। **स्वामियों** को भोजन कराने के बाद हम लोगों ने भी खाया-पिया। उसके बाद वहीं मन्दिर में जाकर आराम करने लगे। कुछ ही देर बाद वे दोनों **स्वामी** भी आ गए। उन दोनों से देश-काल की बातचीत होती रही। इतने में वे तीसरे **स्वामी** भी वहाँ आ गए और एक आसन डालकर एक ओर बैठ गए।

उन दोनों **स्वामियों** में एक अधिक वृद्ध थे। उन्होंने **वाजपेयी जी** से कहा—ये **स्वामी जी** आप लोगों की शङ्काओं का समाधान कर सकेंगे। इन्होंने अँगरेजी का अच्छा अभ्यास किया है।

वाजपेयी जी ने कहा—सो महाराज, मैं उन अँगरेजी-पढ़ों में नहीं हूँ, जो **'धर्म-कर्म'** को ढकोसला समझते हैं।

उन **स्वामी जी** के सम्बन्ध में मुझे पहले से ही कुछ कौतूहल-सा था। मैंने पूछा— तो क्या **स्वामी जी** अंग्रेजी भी जानते हैं?

'जानते ही नहीं, एम०ए० पास हैं। संस्कृत के भी पण्डित हैं। पहले एक कालेज में अध्यापक थे।'

'संन्यास क्यों ले लिया?'

'यह तो कोई प्रश्न नहीं है। मन में विराग का उदय हुआ, छोड़कर निकल पड़े।'

वाजपेयी जी ने कहा— महाराज, इस समय हम ब्राह्मणों के यहाँ तो धर्म की बड़ी छीछालेदर हो रही है। न **'देव-कर्म'** होता है, न **'पितृ-कर्म'**, हाँ, **'पेट-कर्म'** अवश्य हो रहा है!

स्वामी जी हँसने लगे। उन्होंने कहा—बिना **'पेट-कर्म'** के कोई कर्म नहीं हो सकता और आपने जो यह कहा है कि नव-युवक लोग **'नित्य-कर्म'** छोड़ बैठे हैं, तो यह उनके माता-पिता का दोष है। नहीं तो **'सन्ध्या-वन्दन'** तो वह वस्तु है कि अकेले उसी के करते रहने से प्राणी का परम कल्याण हो सकता है। **'प्राणायाम'** के बाद जो **आचमन का मन्त्र** है, केवल उसी के आशय की ओर ध्यान देने से आप **'सन्ध्या-वन्दन' का महत्त्व** हृदयङ्गम कर

सकते हैं। उसमें **हृदय-शुद्धि** की जिस भावना का निदर्शन है, उस तरह का विधान कदाचित् ही किसी धर्म के **'नित्य-कर्म'** में मिलेगा।

अब तक मैं चुपचाप बैठा **स्वामी जी** का वार्तालाप सुन रहा था। मैंने पूछा—यह कैसे आप कहते हैं कि वैसी बात अन्य धर्मों में नहीं है?

'मैंने जो बात कही है, ठीक कही है और वही क्यों? **हिन्दू-धर्म** में बहुतेरी ऐसी बातें हैं, जैसी दूसरे धर्मों में न मिलेंगी। उदाहरण के लिए आप **'शान्ति-पाठ'** के मन्त्रों को ही देखने की कृपा करें। अपने **'पितृ-तर्पण'** को ही लें। क्या किसी धर्मोपासना में विश्व के कल्याण की भावना इतने उदात्त रूप में मिल सकती है? आपको अपने **'वैदिक धर्म'** का अध्ययन करना चाहिए। तब आप उसकी **'विश्व की कल्याण-भावना'** को हृदयङ्गम कर सकेंगे।'

स्वामी जी के उपदेशात्मक सुर से मैं मन-ही-मन खीझ उठा था। मैंने व्यङ्ग्य के स्वर में कहा— ठीक है **स्वामी जी!** हिन्दू-धर्म की जैसी बातें अन्य धर्मों में नहीं हैं। हिन्दुओं का **'वाम-मार्ग'** ही किस धर्म में मिल सकेगा!

स्वामी जी ने कुछ खिन्न-से होकर मेरी ओर देखा, परन्तु तुरन्त ही अपने को सँभालकर उन्होंने मुस्करा दिया। फिर गम्भीर होकर वे बोले—हाँ, बहुत ठीक कहते हो। हिन्दुओं का **'वाम-मार्ग'** तो किसी भी धर्म में नहीं मिल सकेगा। वह तो भारत की एक अपनी विशेष वस्तु है।

वाजपेयी ने समझा कि स्वामी जी असन्तुष्ट हो गए हैं। उनको मेरा उस तरह पूछना अशिष्टता का द्योतक जान पड़ा। उन्होंने कहा— महाराज, आप इनकी बातों पर ध्यान न दें। ये इसी प्रकार की बातें कहा करते हैं। क्षमा करें, महाराज! आप दया-पूर्वक इनकी उपेक्षा ही करें।

'नहीं, नहीं। इनका कथन सर्वथा स्वाभाविक है। मुझे इसका काफी अनुभव है। यह धर्म-सम्बन्धी वार्तालाप है, जो दोनों पक्षों के लिए लाभ-दायक हो सकता है।'

वाजपेयी जी ने कहा— महात्माओं के दर्शनों का यही तो फल है। कल बारात में कुछ लोग धर्म की हँसी उड़ा रहे थे और उसे पण्डितों का ढकोसला बतला रहे थे!

स्वामी जी बोले—यह हमारी शिक्षा-दीक्षा का दोष है। **धर्म की महिमा** के सम्बन्ध में **क्षेमेन्द्र कवि** ने लिखा है— **''कान्तार-दुर्गेषु परिच्युतानां, तापातुराणां पर-लोक-मार्गे। स्निग्धः प्रवृद्धः फल-पूरिताशः, छाया-तरो धर्म-समोऽस्ति नान्यः॥''** अर्थात् दुर्गम जङ्गल में भटके हुए तथा पर-लोक के मार्ग में ताप-पीड़ित प्राणियों के लिए **'धर्म'** के समान स्निग्ध, प्रवृद्ध और फलद अन्य छाया-तरु नहीं है। **'धर्म'** के सम्बन्ध में जो लोग उस तरह की बातें करते हैं, अपना अज्ञान प्रकट करते हैं। कम-से-कम हम लोग तो ऐसी अनर्गल बातें कर ही नहीं सकते।

अभी तक जो वे तीसरे **संन्यासी** चुपचाप बैठे हम लोगों की बातें सुन रहे थे, बोले— जिज्ञासुओं को सन्मार्ग बताना हमारा धर्म है। (मेरी ओर सङ्केत करके कहा) आपके ये मित्र एक सच्चे जिज्ञासु हैं, पर इन्हें कदाचित् अभी तक कोई बतानेवाला नहीं मिला है, अन्यथा **'वाम-मार्ग'** के सम्बन्ध में इनके विचार इस तरह के न होते।

मैंने पूछा—तो क्या आप बताने की कृपा करेंगे? क्या सचमुच **'वाम-मार्ग'—हिन्दू-धर्म की**

एक विशेष वस्तु है?

'हाँ, **'वाम-मार्ग'—हिन्दू-धर्म की एक असाधारण विशिष्ट वस्तु** है। यदि उसके सम्बन्ध में आप कुछ जानना चाहते हैं, तो मैं यथा-सम्भव सब कुछ बताने को तैयार हूँ।'

वाजपेयी जी ने कहा— पहले ये कलकत्ते से छुट्टी पा लें, तब आपसे अपना समाधान करेंगे। अब जाने की आज्ञा दें। सन्ध्या हो आई है, और हमें बारात में ८ बजे तक पहुँच जाना है।

वाजपेयी जी का यह हस्तक्षेप मुझे रुचिकर नहीं लगा, परन्तु सन्ध्या हो आई थी, अतएव हम चलने हेतु खड़े होने को लाचार हो गए। सबने **स्वामियों को प्रणाम** किया और **'गङ्गा-तट'** पर आकर नाव पर सवार हो गए। मार्ग में **वाजपेयी जी** ने मुझे खासी फटकारें बताईं। मुझे इस बात का खेद अवश्य हुआ कि समयाभाव के कारण मैं उन **स्वामी जी** से बातचीत न कर सका।

★ ★ ★

'शिवपुरी' से लौटने के बाद **वाजपेयी जी** ने बारात में ऐसा रङ्ग बाँध दिया कि लोग मुझे नास्तिक समझने लगे, परन्तु मैंने उनके आरोपों की ओर ध्यान तक न दिया और यदि वहाँ की बातचीत के सम्बन्ध में कोई कुछ पूछता था, तो मैं उसे हँसकर टाल देता था। धार्मिक वाद-विवाद करने का मेरा स्वभाव ही नहीं है, परन्तु मजा तो विदाई के दिन आया, जब **दादा जी पण्डित बुद्धिराम** को मेरी बहली में बिठाने को लाए।

मेरी बहली के पास आकर **दादा जी** ने मुझसे कहा—**शर्मा,** इन **पण्डित जी** को अपने बहली में बिठा लो। इन्हें तुम्हारे साथ सब तरह का आराम भी मिलेगा।

'हाँ, हाँ, जरूर। आइए **पण्डित जी!**' मैंने बड़ी प्रसन्नता के साथ **पण्डित जी** से कहा।

पर **पण्डित जी** चुपचाप खड़े ही रहे। **दादा जी** ने चकित होकर **पण्डित जी** की ओर देखकर कहा —**पण्डित जी,** बैठते क्यों नहीं? इस तरह खड़े क्यों हो?

'यही कि **शर्मा जी** को कष्ट होगा। मैं **पण्डित** आदमी हूँ और ये नए रङ्ग-ढङ्ग के आदमी हैं।'

'भला-भला! ये तुमसे कम **पण्डित** नहीं हैं। तुम भी **वाजपेयी जी** के चक्कर में आ गए! बैठिए! बैठिए।' यह कहकर **दादा जी** यहाँ से दूसरों के प्रबन्ध के लिए चले गए।

इधर **पण्डित जी** बुरी तरह झेंप गए। यह देखकर मैंने अति विनम्र-भाव से **पण्डित जी** से निवेदन किया—आइए **पण्डित जी!** मेरे साथ आपको किसी तरह का कष्ट न होने पाएगा।

यह कहकर मैंने अपना हाथ बढ़ाया। **पण्डित जी** ने मुझे अपना झोला थमा दिया, जिसे मैंने बहली के पीछे रख दिया। जब **पण्डित जी** चढ़ आए, तब मैं आगे की ओर बहलवान के पीछे बैठ गया और **पण्डित जी** के लिए अधिक-से-अधिक जगह कर दी। **पण्डित जी** बैठते हुए बोले— आपने तो सारी जगह ही खाली कर दी है और खुद सिमट कर एक ओर बैठ गए हैं! इस तरह बहल की यह लम्बी यात्रा कैसे होगी? आइए, अच्छी तरह बैठिए।

खैर, जब हम दोनों आदमी अच्छी तरह बैठ गए और आगे की सवारियाँ चल पड़ीं, तब हमारे बहलवान ने भी बैल हाँके। कुछ दूर चलने के बाद जैसा बारातों में होता है, सवारियों की दौड़ शुरू हुई। हमारे बहलवान ने भी उसमें भाग लेना चाहा, पर **पण्डित जी** की डाँट-डपट से वह वैसा न कर सका। फलतः हम

लोग पिछड़ गए। उन्होंने बैलों को उनकी स्वाभाविक चाल से ही हाँकने दिया। **पण्डित जी** ने कई एक बारातों का हाल बताया, जिनमें बहलों और गाड़ियों की दौड़ के फल-स्वरूप लोगों की जानें तक चली गई थीं।

जब **पण्डित जी** का वह व्याख्यान समाप्त हो गया, तब मैंने **पण्डित जी** से पूछा—आपने मुझे नई रोशनी का आदमी कैसे समझ लिया?

'सो मैं क्या जानूँ! बारात में लोग-बाग आपके सम्बन्ध में कुछ ऐसा ही कहते रहते थे।'

'लोग क्या कहते थे, मैंने वह सब नहीं सुना। और यदि आपने वैसा कुछ सुना था, तो उसे सच कैसे मान लिया? सम्भव है, वे लोग हँसने के लिए वैसा कहते रहे हों।'

'हो सकता है, परन्तु वे तो अपने कथन की पुष्टि में **'शिवपुरी'** के वार्तालाप का उल्लेख करते थे। फिर मैं भी **'शिवपुरी'** गया था और **स्वामी जी** ने भी आपके आक्षेप की बात मुझसे कही थी।'

'कौन-सा आक्षेप? मैंने तो कोई आक्षेप नहीं किया था।'

'क्या आपने यह नहीं कहा था कि **'वाम-मार्ग'** भी तो **हिन्दू-धर्म** की ही देन है? इस कथन में कितना व्यङ्ग्य है, निन्दा की कैसी ध्वनि है, क्या इस ओर आपका ध्यान नहीं जाता है?'

'मैंने वह आक्षेप अनजान में थोड़े ही किया था। **'वाम-मार्ग'** वास्तव में एक निन्दनीय धर्म है। इस देश में उसकी कौन निन्दा नहीं करता है?'

'आप तो रुष्ट हो गए। आप भूलते हैं। धर्म निन्दनीय नहीं हो सकता। आप लोग जल्दी उठकर चले आए, नहीं तो **स्वामी जी** ने आपकी शङ्का को वहीं दूर कर दिया होता।'

'तो क्या वे **'वाम-मार्ग'** का समर्थन करते?' मैंने चकित होकर कहा।

'उनकी बातचीत से तो ऐसा ही जान पड़ता था। और धर्म का पक्ष कौन धर्मवान् व्यक्ति नहीं लेगा?'

मैंने बात काटकर कहा—क्या आप भी उसका समर्थन करेंगे? मांस-खाना, मदिरा-पान करना क्या आप धर्म समझते हैं? आप वैष्णव हैं.....मथुरा जी के कण्ठी-बन्द चौबे हैं.....!

पण्डित जी ने उसी तरह मधुरता से कहा—मांस-मदिरा की बात तो मैं नहीं जानता। हाँ, धर्म की बात जानता हूँ और उसका मैं अवश्य ही समर्थन करूँगा।

'वाम-मार्ग' में और है ही क्या?' मैंने कड़ककर कहा।

'मैं' **वाम-मार्ग** का आचार्य नहीं हूँ, परन्तु जिस शास्त्र में उसका प्रतिपादन किया गया है, उसका थोड़ा-बहुत ज्ञान मुझे अवश्य है और वह शास्त्र ऐसा-वैसा नहीं है कि चुटकियाँ बजाकर उड़ा दिया जा सके।'

'वह कौन शास्त्र है? क्या उसका नाम जान सकता हूँ?'

'क्यों नहीं? उसे लोग **'तन्त्र-शास्त्र'** कहते हैं। उसके वक्ता **सदा-शिव** माने गए हैं और इसी कारण **'वेदों'** की भाँति वह भी **'श्रुति'** की श्रेणी में रखा गया है। उसके ग्रन्थों की भी बहुत अधिक संख्या है और उन सभी में **'योग'** और **'उपासना'** का विस्तार के साथ निरूपण किया गया है। मैं तो यहाँ तक कहूँगा कि **'भारत की परम्परागत अध्यात्म-विद्या' का विकसित रूप**

'तन्त्र-ग्रन्थों' में ही भले प्रकार बताया गया है। ऐसे ही महान् शास्त्र में **'वाम-मार्ग'** का प्रशंसा के साथ उल्लेख किया गया है। तब उसकी निन्दा कोई कैसे कर सकता है?'

'तो क्या आपके उस **'तन्त्र-शास्त्र'** में मांस-मदिरा का विधान किया गया है?'

'मांस-मदिरा की जो बात आप कहते हैं, सो उसका उल्लेख किस **'वेद'** या **'धर्म-ग्रन्थ'** में नहीं है? **'शुक्ल यजुर्वेद'** के अध्याय १९ में यह मन्त्र है— **'ब्रह्म क्षत्रं पवते तेज इन्द्रियं सुरया सोमः सुत आ सुतो मदाय शुक्रेण देव देवताः पिप्रिग्धि रसेनान्नं यजमानाय धेहि।'** अर्थात् हे सोमदेव, सुरा द्वारा बलवान् तथा तेजवान् होकर अपनी निर्मल शक्ति से देवताओं को प्रसन्न करो, यज्ञ-कर्त्ता को रसवाला भोजन और ब्राह्मण तथा क्षत्रिय को शक्ति प्रदान करो। इसी प्रकार **'ऋग्वेद'** में भी **'अर्चन्त्यर्कं मदिरस्य पीतये'** अर्थात् 'मदिरा पीकर सूर्य को पूजते हुए' कहा है, परन्तु इन बातों से कोई **'वेदों'** की तो निन्दा नहीं करता। यह तो रहस्य है उनका।'

'तो क्या **'वेद'** में भी ऐसी बातें है?'

पण्डित जी कुछ जोश में आ गए थे। मेरी बात को अनसुनी कर वे कहते ही गए—आप तो मांस-मदिरा की ही बात कहकर **'वाम-मार्ग'** से नाक सिकोड़ते हैं, परन्तु अनेक लोग तो **'तन्त्र'** के **'षट् प्रयोगों'** को लेकर उनका उपहास करते हैं। वे यह नहीं जानते हैं कि वैसे प्रयोगों का आकर सारा-का-सारा **'अथर्व-वेद'** है और संहिता-ग्रन्थ ही क्यों, ज्ञान-मार्ग-परक **'उपनिषदों' में वशीकरण** आदि प्रयोगों का उल्लेख है। उदाहरण के लिए **'बृहदारण्यक उपनिषद्'** (६.४) में स्त्री-वशीकरण, पत्नी के प्रेमी के मारण, सन्तान-प्राप्ति आदि के मन्त्र हैं। इसी प्रकार **कौशीतकी** (२) में भी धन-प्राप्ति, स्त्री या पुरुष-वशीकरण आदि के मन्त्र हैं। तब **'तन्त्र'** ही क्यों निन्दनीय ठहराए जाएँ? वह **'उपासना'**-विषय का एक महान् शास्त्र है। जगत् के मानव-समाज के कल्याण के लिए उसमें अधिकारी के भेदानुसार भाँति-भाँति के विधान किए गए हैं। मेरा ज्ञान शास्त्र-सम्बन्धी बहुत सीमित है। मैं उस सम्बन्ध में विस्तार के साथ निवेदन नहीं कर सकूँगा, पर यह बात आप जान लें कि इष्ट की साधना के बारे में जो विधियाँ **'तन्त्र-शास्त्र'** में बताई गई हैं, वैसी अन्यत्र नहीं।

'जब यह बात है, तब लोग **'वाम-मार्ग'** की निन्दा क्यों करते हैं?'

'यह तो निन्दा करनेवाले जानें। **'वाम-मार्ग'** तो **'आर्य-धर्म'** का एक अङ्ग है। मैं तो संसार के किसी भी धर्म की निन्दा नहीं करता।'

बातचीत का यह सिलसिला एकाएक इसलिए बन्द हो गया कि हमारी बहल उस जगह पहुँच चुकी थी, जहाँ बाराती जल-पान करने के लिए ठहर गए थे। वहाँ पहुँचने पर हम लोग भी जल-पान करने को ठहर गए। जलपान कर चुकने के बाद जब बारात चलने को हुई, तब **पण्डित जी** ने अपना झोला बहली से उतार लिया। उन्होंने कहा— भाई, **दादा जी** ने मुझे विदा कर दिया है। अब मुझे यहाँ से अपने एक यजमान के यहाँ जाना है। **जय जमुना मैया** की।

मैंने बड़े आदर से **चौबे जी** को प्रणाम किया। मेरी भी बहल चल चुकी थी और अब हमारी बहल बारात में सबसे आगे जा रही थी, क्योंकि बहल में **चौबे जी** नहीं थे।

(क्रमशः)

तन्त्र में अनुसन्धान

'कुल-वाणी-रन' भूपेन्द्रदत्त शर्मा, १४५ नया बाँस, नदी मार्ग, मुजफ्फरनगर (उ०प्र०)-२५१००२

संवत् २०५५ में '**श्री आदि-काली-मठ**' काशी द्वारा प्रकाशित **श्रीकाली पूजा-पद्धति** (मूल्य ७५ रु०) अति उपयोगी है। मेरे पास इस 'पद्धति' की पाण्डु-लिपि सुरक्षित है। प्रकाशित 'पद्धति' के पृष्ठ ११४/१५ पर अष्ट-मातृकाओं के जो **ध्यान-श्लोक** दिए हैं, उनसे भिन्न मुझे अपनी 'पाण्डु-**लिपि**' में दिखाई दिए। 'नारसिंही के ध्यान में एक पंक्ति भी लुप्त पाई। इसी प्रकार 'नित्याओं' व '**अष्ट-भैरवों**' का नामोल्लेख तो है, किन्तु ध्यान नहीं दिए गए। अत: यहाँ इन सभी को प्रस्तुत कर रहा हूँ। 'नित्याओं' के ध्यान '**श्रीपीताम्बरा-पीठ**, दतिया (मध्य प्रदेश) के '**तान्त्रिक-पञ्चाङ्ग**' में प्रकाशित हैं।

१. अष्ट - मातृकाओं के ध्यान

१. ब्राह्मी—

ब्राह्मी हंस-समारूढां, स्वर्ण-वर्णां चतुर्भुजाम्। चतुर्वक्त्रां त्रिनेत्रां च, ब्रह्म-कूर्चं च पङ्कजाम्॥
दण्ड-पद्माक्ष-सूत्रं च, दधतीं चारु-हासिनीम्। जटा-जूट-धरां देवीं, भावयेत् साधकोत्तम॥

२. नारायणी—

नारायणीं महा-दीप्तां, श्यामां गरुड़-वाहिनीम्। नानालङ्कार-संयुक्तां, चारु-केशां चतुर्भुजाम्॥
घण्टां शङ्ख -कपालं च चक्रं सन्दधतीं पराम्। मधु-मत्तां मदोल्लास - दृष्टिं सर्वाङ्ग -सुन्दरीम्॥

३. माहेश्वरी— माहेश्वरीं वृषारूढां, शुक्लां त्रि-नयनान्विताम्।
कपालं डमरुं चैव वरदाभय - शूलकम्।
टङ्कणं च दधतीं देवीं, नानाऽलङ्कार - भूषिताम्॥

४. चामुण्डा—

चामुण्डां अट्ट - हासां विकसित-दशनां भीम-वक्त्रां त्रिनेत्राम्।
नीलाम्भोज-प्रियाऽऽभां प्रमुदित-वपुषां नर - मुण्डालि-मालाम्॥
खड्गं शूलं कपालं नर-शिर-घटितं खेटकं धारयन्तीम्।
प्रेतारूढां प्रमत्तां मधु-मद-मुदितां भावयेच्चण्ड-रूपाम्॥

५. कौमारी—

कौमारीं कुंकुमाभासां, त्रिनेत्रां शिखि-संस्थिताम्।
चतुर्भुजां शक्ति - पाशांकुशाभय - धारिणीम्।
नानाऽलङ्कार - संयुक्तां, प्रमत्तां परि-चिन्तयेत्॥

६. अपराजिता— अपराजितां च पीताभामक्ष - सूत्र-वर-प्रदाम्।
कपालं मातुलुङ्गं च, दधतीं परि-चिन्तयेत्॥

७. वाराही— वाराहीं धूम्र-वर्णां च, वराह-वदनां शुभाम्।
फलकं खड्गं मूषलं च, हलं वेद-भुजैर्युताम्॥

८. नारसिंही— नारसिंहीं नृसिंहस्य, विभ्रतीं सदृशं वपुः।
चतुर्भुजां विशालाक्षीं, महा-रौद्रीं वर-प्रदाम्॥

२. अष्ट-भैरवों के ध्यान

प्राय: कुछ साधक '**अष्ट-मातृकाओं** के साथ '**अष्ट-भैरवों**' का पूजन करते हैं, तो कुछ '**अष्ट-भैरवों**' का पूजन '**अष्ट-भैरवियों**' के साथ करते हैं। '**अष्ट-भैरवों**' के साथ क्रमश: '**अष्ट-भैरवियों**' का ध्यान भी करना आवश्यक है। ये ध्यान प्रकाशित '**पूजा-पद्धति**' के पृष्ठ ११५ पर दृष्टव्य हैं।

१. असिताङ्ग-भैरव—

ॐ ध्यायेन्नीलाद्रि-सङ्काशं, त्रिनेत्रं चन्द्र-शेखरम्। जटा-जूट-धरं बाहु-चतुष्टय-समन्वितम्॥
कपाल - पङ्कज - धरं, वराभय-प्रदायिनम्। भैरवी-शक्ति - समायुक्तं, शत - चन्द्र - निभाननम्॥

२.रुरु-भैरव—

ॐ जलदाभं विशालाक्षं, शङ्ख-चक्र लसत्-करम्। त्रिशूलं पान-पात्रं च, भाल-चन्द्र-सिताननम्॥
नानालङ्कार-संयुक्तं, कृत्ति - वासं सुरालयम्। मदिरा - घूर्ण - नयनं, रुरु - भैरवमाश्रये॥

३. चण्ड-भैरव—

ॐ बाल-सूर्य-प्रतीकाशं, जटा-मुण्डित-मस्तकम्। चतुर्भुजं त्रि-नयनं, भाल-चन्द्र विभूषणम्॥
त्रिशूल - खट्वाङ्ग-धरं, वर-दानाभय-प्रियम्। रज:-सत्व-गुणाक्रान्तं, चण्ड-भैरवमाश्रये॥

४. क्रोध-भैरव—

ॐ सहस्र-तडिताभासं, नयन त्रि-तयान्वितम्। खड्ग-खेटक-पट्टीश-नाग-पाश-कराम्बुजम्॥
घोर-दंष्ट्रं करालाङ्गं, हेम-कुण्डल-धारिणम्। धूम्र-भैरवी-सहितं, भजेऽहं क्रोध- भैरवम्॥

५. उन्मत्त-भैरव—

ॐ महा-मरकताभासं, चन्द्रार्ध-कृत-शेखरम्। चतुर्हस्तं त्रि-नयनं, घण्टा-डमरु-वादिनम्॥
मदिरा-पान-उन्मत्तं, शिरास्त्र-मुण्ड-मालिनम्। भीम-भैरवी-सहितं, भजेदुन्मत्त-भैरवम्॥

६. कपाली-भैरव—

ॐ सुभग-नयनमास्यं, चन्द्र-मौलि-सुशोभितम्। दनुज-रुधिर-पात्रं, विभ्रतं शूल-टङ्ककम्॥
सरसिरुह-दधानं, नीलाभासं-कान्ति युक्तम्। शशि-मणि गज-हारं, चिन्तयेऽहं कपालिनम्॥

७. भीषण-भैरव—

ॐ ध्यायेद् भीषण-भैरवं त्रि-नयनं रक्ताङ्ग-राग-सज्रम्।
बन्धूकारुण - वाससं कर - दधत् - पाशांकुश - तोमरम्॥
खड्गं चाक्ष - स्त्रजं सुधा - कृत - तनु - हारादि - भूषोज्ज्वलम्।
काञ्ची - दाम - विराजितं, कटि - तटं - वशिनिका - संयुतम्॥

८. संहार-भैरव—

ॐ संहार-भैरवं ध्यायेत्, प्रलयानल-सन्निभम्। जटा-भार लसच्चन्द्र-खण्डमुग्रं भयङ्करम्॥
मुण्ड-मालावला-कर्ण-सूत्र-कुण्डल-मण्डितम्। संहारास्त्रं चक्रमसि, विभ्रतं वर-दायिनम्॥
चतुर्भुजं मदोन्मत्तं, अट्टहास-दिगम्बरम्। मोहिनी-भैरवी-युतं, क्रोधावेश-कलेवरम्॥
कालान्त-कारिणं रौद्रं, सृष्टि -स्थिति-लयान्तकम्। सर्व-देव-स्तुतं सूर्य-चन्द्र-वह्नि-त्रि-नेत्रकम्॥

(क्रमश:)

'राम' का अर्थ

* गुप्तावतार बाबाश्री

'राम' भगवान् रामचन्द्र का संक्षिप्त नाम है, किन्तु **'राम'** एक मन्त्र भी है। **'राम'** का अर्थ किया जाए, तो इसमें **आराम, विराम** तथा **अभिराम** तीनों आ जाते हैं। इसलिए **'राम'**-नाम **कल्प-वृक्ष** के समान **सम्पूर्ण आपत्तियों का विनाश करनेवाला** तथा लोक-त्रय को **आनन्द** देनेवाला है।

'राम' शब्द संस्कृत की **'रम्'**-धातु से बना है। **'रम्'** अर्थात् तन्मयता प्राप्त करना। प्रभु योगियों के मन में रमण करते हैं, अतएव **'राम'** कहलाए, किन्तु प्रभु केवल योगियों के ही चित्त में रमण करते हैं, ऐसा कहें, तो प्रभु की सर्व-व्यापकता नहीं रहती। सर्व-व्यापक होने से प्रभु सब जगह रमण करते हैं, केवल योगियों के ही चित्त में नहीं। अत: विश्व के सम्पूर्ण पदार्थों में रमण कर उन्हें रम्य बनाने के कारण प्रभु **'राम'** कहलाए।

जिस प्रकार **ॐ-कार** में उत्पत्ति, स्थिति तथा लय ये तीनों क्रियाएँ विद्यमान हैं, उसी प्रकार **'राम'** में भी तीनों क्रियाएँ विद्यमान हैं। **'प्रणव'** ढाई अक्षरों से बना है तथा **'राम'**-मन्त्र तीन अक्षरों (र+आ+म=रा+म) से बना है। **'प्रणव'** में **'अ'** उत्पत्त्यात्मक है, परन्तु उत्पत्ति का तत्त्वाङ्ग अग्नि है तथा अग्नि का बीज **'र'-कार** है। **'अ'** तत्त्वाङ्ग में आने पर **'र'** में परिणत हो जाता है। जैसे कोई विपरीत घटना होने पर मुख से 'अर्र्र्र्' निकाल पड़ता है अर्थात् **'अ'** से **'र'** की जाग्रति होती है।

ॐ-कार में **'उ'** स्थित्यात्मक है। **'उ'** तत्त्वाङ्ग में आने पर **'अ'-कार** बन जाता है। उत्पत्ति के साथ शक्ति की आवश्यकता है और वह शक्ति हमें सूर्य से प्राप्त होती है। **'अ'—सूर्य-बीज** है। **सूर्य** स्थिति देता है। अन्त में **प्रणव** के **अर्ध-मकार** अर्थात् **बिन्दु 'म'** में **'अ'** के मिलने से **'राम'**-शब्द का **'म'** बनता है। अर्ध-**'म'**-कार का **तत्त्वाङ्ग 'म'** है। **'म'—'चन्द्र-बीज'** है।

'चन्द्र' को हिम-कर कहते हैं। उसमें **शीतलता** है। शरीर यदि शीतल हो जाए, तो मनुष्य मर जाए। अतएव **'म'** को लयात्मक बताया है किन्तु **'चन्द्र'** का दूसरा अर्थ **अमृत** अर्थात् पोषण भी होता है।

तुलसीदास जी ने कहा है—

बन्दौं राम-नाम रघु-वर के।
हेतु कृशानु भानु हिमकर के।।

अर्थात् मैं रघु-वर के **'राम'**-नाम का वन्दन करता हूँ क्योंकि उसमें **कृशानु=अग्नि, भानु=सूर्य, हिम-कर=चन्द्र** अर्थात् **अग्नि=जीवन, सूर्य=आधार, चन्द्र=मरण** अर्थात् **उत्पत्ति, स्थिति, लय**—इन तीनों क्रियाओं के तत्त्वाङ्ग हैं।

इस प्रकार **'प्रणव'** को तत्त्वात्मक भाव में परिणत करें, तो **'राम'** होता है। अतएव **'राम'**-मन्त्र भी **ॐ-कार** से कम नहीं है।

'राम'- नाम

'राम'- नाम **कल्प-वृक्ष** के समान **सम्पूर्ण आपत्तियों का विनाश करनेवाला** तथा लोक-त्रय को **आनन्द** देनेवाला है।

रजि० सं० ए० डी० ६६ अप्रैल, २००० रजि० सं० ३२६८१/५७

राम नाम-मणि दीप धरु जोह देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहेरहुँ जो चाहसि उजियार।।

★

सो सुख-धाम राम अस नामा।
अखिल लोक - दायक विश्रामा।।

वन्दौ राम नाम रघुवर के।
हेतु कृशानु, भानु, हिमकर के।।

★

मैं रघुवर के 'राम'-नाम का वन्दन करता हूँ क्योंकि इसमें 'अग्नि', 'सूर्य' तथा 'चन्द्र' के बीज हैं।

—गोस्वामी तुलसीदास

सम्पादक/प्रकाशक/मुद्रक : श्री ऋतशील शर्मा, चण्डी-धाम, प्रयागराज-६ ✆ : ५०२७८३